MPAMT-606

तालों का अध्ययन **IV**

एम0पी0ए0 संगीत – चतुर्थ सेमेस्टर

संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग

मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

MPAMT-606

तालों का अध्ययन **IV**
एम0पी0ए0 संगीत – चतुर्थ सेमेस्टर
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग
मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
तीनपानी बाईपास रोड, ट्रान्सपोर्ट नगर के पीछे,
हल्द्वानी, जिला नैनीताल, पिनकोड–263139
फोन नं0 : 05946–286000 / 01 / 02
फैक्स नं0 : 05946–264232,
टोल फ्री नं0 : 18001804025
ई–मेल : **info@uou.ac.in**
वेबसाईट : **www.uou.ac.in**

MPAMT-606

अध्ययन मंडल

कुलपति (अध्यक्ष)
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रो0 एच0 पी0 शुक्ल(संयोजक)
निदेशक–मानविकी विद्याशाखा,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 विजय कृष्ण (सदस्य)
पूर्व विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग,
डी0एस0बी0 कैम्पस, नैनीताल,
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

डॉ0 आशा पाण्डे कृष्ण(सदस्य)
विभागाध्यक्षा, संगीत विभाग,
एच0एन0बी0 गढ़वाल विश्वविद्यालय,
श्रीनगर

डॉ0 मल्लिका बैनर्जी(सदस्य)
संगीत विभाग,
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त.
विश्वविद्यालय, दिल्ली

द्विजेश उपाध्याय(सदस्य)
सहायक प्राध्यापक(ए.सी.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

पाठ्यक्रम संयोजन, प्रूफ रिडिंग एवं फार्मेटिंग

प्रदीप कुमार
सहायक प्राध्यापक,
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

द्विजेश उपाध्याय
सहायक प्राध्यापक(ए.सी.),
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

जगमोहन परगांई
सहायक प्राध्यापक(ए.सी.),
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

अशोक चन्द्र टम्टा
सहायक प्राध्यापक(ए.सी.),
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रकाश चन्द्र आर्या
सहायक प्राध्यापक(ए.सी.),
संगीत नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

पाठ्यक्रम संपादन

डॉ0 विजय कृष्ण
पूर्व विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग,
डी0एस0बी0 कैम्पस, नैनीताल,
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

डॉ0 चन्द्रशेखर तिवारी
वरिष्ठ संगीतज्ञ,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 रेखा साह
पूर्व विभागाध्यक्षा, संगीत विभाग,
डी0एस0बी0 कैम्पस, नैनीताल,
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

द्विजेश उपाध्याय
सहायक प्राध्यापक(ए.सी.)–संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल

इकाई लेखन

1.	डॉ0 विजय कृष्ण	इकाई 1, 4, 5, 6
2.	डॉ0 महेश पाण्डे	इकाई 2
3.	डॉ0 रेखा शाह	इकाई 3

कापीराइट : @उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
संस्करण : सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति
प्रकाशन वर्ष : जनवरी 2022
प्रकाशक : उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल–263139
ई–मेल : books@uou.ac.in

इस सामग्री के किसी भी अंश को उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोग्राफी, चक्रमुद्रण द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

एम0पी0ए0 संगीत – चतुर्थ सेमेस्टर
तालों का अध्ययन IV – एम0पी0ए0एम0टी0–606

इकाई	इकाई का नाम	पृष्ठ
इकाई 1	संगीतज्ञों (पं0 शारंगदेव, कुदऊ सिंह, पं0 राम सहाय, उस्ताद मुनीर खॉ, उस्ताद नत्थु खॉ, उस्ताद जहागीर खॉ व आचार्य बृहस्पति) का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान।	01–09
इकाई 2	संगीत के प्रसिद्ध ग्रन्थों (संगीत रत्नाकर, चतुर्दण्डीप्रकाशिका, नारदीय शिक्षा, संगीत मकरंद, संगीत चिन्तामणि, संगीतांजलि एवं संगीत–पारिजात) का सामान्य अध्ययन।	10–29
इकाई 3	संगीत संबंधी विषयों पर निबन्ध।	30–39
इकाई 4	पाठ्यक्रम की तालों का परिचय व तालों के ठेकों को दुगुन, तिगुन व चौगुन की लयकारी सहित लिपिबद्ध करना।	40–53
इकाई 5	पाठ्यक्रम की तालों के ठेकों को आड, कुआड, बिआड, 3/4, 4/3 व 4/5 की लयकारी सहित लिपिबद्ध करना।	54–61
इकाई 6	तबले की रचनाओं (पाठ्यक्रमानुसार) को लिपिबद्ध करना।	62–82

इकाई 1 – संगीतज्ञों (पं0 शारंगदेव, कुदऊ सिंह, पं0 राम सहाय, उस्ताद मुनीर खॉ, उस्ताद नत्थु खॉ, उस्ताद जहागीर खॉ व आचार्य बृहस्पति) का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 पं0 शारंगदेव का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान
1.4 कुदऊ सिंह का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान
1.5 पं0 राम सहाय का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान
1.6 उस्ताद मुनीर खॉ का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान
1.7 उस्ताद नत्थु खॉ का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान
1.8 उस्ताद जहांगीर खॉ का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान
1.9 आचार्य बृहस्पति का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान
1.10 सारांश
1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम के एम0पी0ए0एम0टी0–606 की पहली इकाई है। पूर्व में आप उत्तर भारतीय एवं दक्षिण भारतीय संगीत के अवनद्य वाद्यों के विषय में जान चुके हैं। आप पाश्चात्य संगीत के सन्दर्भ में ताल को तथा पाश्चात्य संगीत के अवनद्य वाद्यों से भी परिचित हो चुके होंगे। आप तबले की रचनाओं जैसे तिपल्ली, चौपल्ली, फरमाइशी, कमाली, नौहक्का, तिहाई(दमदार, बेदम, चक्करदार) को भी जान गए हैं।

प्रस्तुत इकाई में आप उन संगीतकारो एवं संगीत कलाकारो के विषय में जानेंगे जिन्होंने इसके क्रियात्मक स्वरुप को मूर्तरुप देकर इस कला को सृमद्ध किया।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप संगीतज्ञो, शास्त्रकारों एवं कलाकारो के जीवन परिचय के माध्यम से उनकी जीवन शैली से परिचित होंगे। आप उनके भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान को उनके ग्रन्थों की रचनाओं एवं शिष्यों के माध्यम से व उनकी शैली के प्रचार–प्रसार के माध्यम से जानेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आपः–

1. संगीत शास्त्रकार के जीवन परिचय एवं उनके द्वारा रचित ग्रन्थों से परिचित होंगे।
2. संगीत कलाकारों की जीवन शैली को जान सकेंगे एवं इससे प्रेरणा प्राप्त करेंगे।

1.3 पं0 शारंगदेव का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान

तेरहवीं शताब्दी के संगीत शास्त्रकारों में शारंगदेव का स्थान सर्वोच्च माना जाता है। इनकी प्रसिद्ध संगीत रचना ग्रन्थ संगीत–रत्नाकर है। इनके एक टीकाकार सिंह भूपाल का कहना है कि शारंगदेव के उदय से पूर्व संगीत की समस्त पद्धति भरत आदि के ग्रन्थों के दुर्बोध हो जाने के कारण दुर्गम हो गई थी। संगीत रत्नाकर भरत के नाट्यशास्त्र के बाद का ग्रन्थ है। यह संगीत–रत्नाकर संगीत के उपलब्ध ग्रन्थों का शीर्षस्थ है। इसका रचनाकाल लगभग 12 से 15 ई0 माना जाता है। सिंह भूपाल एवं कल्लिनाथ ने इस पर संस्कृत में तथा विट्ठल ने तेलगू में इसकी टीका की है। संगीत रत्नाकर में प्राचीन तथा शारंगदेव के समय के प्रचलित संगीत का वर्णन है। इसमें स्वराध्याय, रागाध्याय, प्रबन्धाध्याय, तालाध्याय, वाद्याध्याय तथा नृत्याध्याय सम्मिलित हैं।

आधुनिक मेल अथवा थाट पद्धति को मस्तिष्क में रखकर रत्नाकर द्वारा वर्णित जातियों एवं रागों को समझा जाना कदापि सम्भव नहीं था। शारंगदेव द्वारा तुरुष्क तोडी एवं तुरुष्क गौड जैसे रागों का प्रतिपादन सिद्ध करता है कि उस युग में दक्षिण तक संगीत पर मुस्लिम प्रभाव पहुँच चुका था। रत्नाकर वर्णित रागों में अनेक राग ऐसे हैं जिनके साथ मालव, गौड, कर्नाट, बंगाल, सौराष्ट, दक्षिण एवं गुर्जर जैसे प्रदेशवर्ती शब्द लगे हुए हैं जो इन रागों का प्रदेश विशेष के साथ सम्बद्ध होना बताते हैं। इस शताब्दी के कुछ लेखकों ने शारंगदेव को समझने का पर्याप्त परिश्रम किये बिना ही उन पर अनेक लाछन लगाए हैं। ऐसे लोगों की निन्दनीय प्रवृति ने महर्षि भरत को भी अपना लक्ष्य बनाया है। शारंगदेव 13 वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में देवगिरि (दक्षिण) के बादशाह के दरबार में रहते थे। आपके दादा कश्मीरी ब्राहमण थे जो बाद में आकर देवगिरि में बस गये। इनके पिता श्री सोढला, राजा भिल्लमा(1187–1191 ई0) और सिंहना (1210–1217 ई0) के दरबार में उच्च कर्मचारी थे। शारंगदेव के

प्रति राजा का असीम प्रेम था जो कि इससे ज्ञात होता है कि आपकी शिक्षा–दीक्षा राजाश्रय में ही हुई। आपके द्वारा संगीत रत्नाकर में नाद, श्रुति, स्वर, ग्राम, मूर्च्छना, जाति आदि का भली–भॉति विवेचन किया गया है। अनेक पूर्व लिखित ग्रन्थों की सामग्री लेकर तत्कालीन उत्तरी–दक्षिणी संगीत का समन्वय किया है। आपने कुल 12 विकृत स्वर माने हैं तथा 7 शुद्ध एवं 11 विकृत जातियां, इस प्रकार 18 जातियां मानी हैं। इन जातियों का विस्तृत वर्णन करने के बाद ग्राम रागों को जातियो से उत्पन्न बताया है तथा ग्राम रागों से ही अन्य राग विकसित बताए हैं। शारंगदेव के स्वर एवं राग आधुनिक स्वर और रागों से मेल नहीं खाते हैं। इसका कारण यह है कि उन्होंने जो श्रुत्यन्तर कायम किये थे वे आज के श्रुत्यन्तरों से भिन्न हैं, यद्यपि संगीत–रत्नाकर में वर्णित राग आज उपयोग में नहीं आ सकते तथापि पुस्तक के अन्य भागों में जो विस्तृत वर्णन शारंगदेव ने दिया है उससे आधुनिक समय में बहुत सहायता मिलती है। कुछ लोगों ने शारंगदेव का शुद्ध थाठ मुखारी, जिसे आधुनिक कर्नाटकी संगीत में कनकांगी भी कहते, इसको स्वीकार किया है। शारंगदेव के द्वारा संगीत के सभी पक्षों की विस्तृत व्याख्या एवं विवेचना की। प्राचीन समय के संगीत को समझने के लिए शारंगदेव का ग्रन्थ संगीत रत्नाकर एक महत्वपूर्ण एवं उपयोगी ग्रन्थ है।

1.4 कुदऊ सिंह का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान

पखावज वादकों में कुदऊ सिंह को पखावज का प्रणेता माना गया है। पखावज वादन के क्षेत्र में इनका नाम बड़े आदर एवं सम्मान के साथ लिया जाता है। यह भी सत्य है कि आप अपने समय में एक अद्वितीय पखावज वादको की श्रेणी में आ गये थे। आपका जन्म सन 1815 ई0 में बॉदा (उत्तर प्रदेश) में हुआ। आपके पिता का नाम गप्पे था। आपने अपनी पखावज की शिक्षा भवानी सिंह उर्फ श्री दास जी से प्राप्त की थी। उन दिनों लखनऊ तथा ग्वालियर, संगीत के विशेष केन्द्र बने हुए थे। लखनऊ के शासक वाजिद अली शाह और ग्वालियर के महाराज जयाजी राव दोनों ही संगीत कला से विशेष प्रेम रखते थे, इसी कारण इन दोनों शहरों में संगीत काफी उन्नति कर रहा था। वाजिद अली शाह के दरबार में पखावज वादन की कुछ प्रतिस्पर्द्धाएं आयोजित हुई क्योंकि इस बीच कई और पखावज वादन करने वाले कलाकार और सामने आये इसलिए नवाब द्वारा पखावज वादन की प्रतिस्पर्द्धा रखी गई तथा इसमें विजेता वादक को एक हजार रुपया देने की घोषणा की गई। कहा जाता है कि कुदऊ सिंह ने इस प्रतियोगता में जोधसिंह नामक पखावजी कलाकार को परास्त कर इसमें यश एवं सम्पति दोनों ही प्राप्त की। इस प्रतिस्पर्द्धा को जीतने के पश्चात नवाब द्वारा इन्हें कुँवर दास की उपाधि से सम्मानित किया गया।

वास्तव में कुदऊ सिंह का पखावज वादन इतना सुमधुर एवं कोमल होता था कि सुनने वाले श्रोता मंत्र–मुग्ध हो जाते थे। आपके विषय में एक कहावत प्रसिद्ध है–यह कहा जाता है कि रामपुर नवाब के यहां सुर–सिंगार वादक हुसैन खॉ तथा कुदऊ सिंह में एक यादगार प्रतियोगिता हुई। द्रुतलय में प्रायः बहुत देर तक बजाते समय जब हुसैन खॉ की उँगलिया विश्राम करने को विवश हुई तो नवाब ने एक साथ दोनों वाद्यो पर एक साथ हाथ रख दिया। कुदऊ सिंह पूरी रात पखावज बजाते रहे। कहा जाता है कि तानसेन के वंशज प्रसिद्ध सितार वादक अमृतसेन से भी उनका मुकाबला हुआ था। इस बीच ग्वालियर दरबार में एक बुजुर्ग ध्रुपद गायक, नारायण शास्त्री की संगति के लिए कुदऊ सिंह को बुलाया गया। महाराज जयाजी राव ने इनका पखावज वादन सुना। मीठा एवं असीमित तैयार हाथ तथा

नियमबद्ध एवं स्पष्ट बाज सुनकर महाराज बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने कुदऊ सिंह को पखावज वादन के लिए अपने दरबार में रख लिया।

कहा जाता है कि 1857 ई0 विद्रोह के समय आप दतिया चले गये थे। दतिया उसमें विद्रोह करने वालों का स्थान था। कुदऊ सिंह अन्तिम दिनों तक दतिया में ही रहे। वे दानी भी माने जाते थे। जो भी उन्हें राजाशाही मिलती थी उनको वह अपने शिष्यों के पीछे खर्च कर देते थे। यह प्रसिद्ध है कि आप अपने शिष्यों के साथ तीन मोमबत्तियॉ जलाकर साधना किया करते थे। कहा जाता है कि कुदऊ सिंह ने एक हजार परनों का आविष्कार किया। आप गजपरन विशेष रुप से बजाया करते थे। इनके बारे में एक किवदन्ति भी है कि इनकी गजपरन की परीक्षा लेने हेतु एक बार इनके ऊपर हाथी भी छोडा गया और परन सुनते ही हाथी डरकर भाग गया। कहने का तात्पर्य यह है कि आपकी वादन शैली उस समय की श्रेष्ठ एवं प्रभावोत्पादक शैली थी। कुदऊ सिंह की तरह का पखावज वादक भारतीय संगीत में कोई अन्य कम ही निकलेगा। इनकी शिष्य परम्परा सुदृढ एवं विशाल थी। इनका व्यक्तित्व अत्यन्त रोबीला था। आपका देहान्त 95 वर्ष की आयु में हुआ, ऐसा माना जाता है। कुदऊ सिंह के प्रमुख शिष्यों में इनके भाई राम प्रसाद, दामाद काशी प्रसाद, भतीजा गया प्रसाद, बाबा राम कुमार, दास अयोध्या तथा मदन मोहन उपाध्याय हैं।

राम प्रसाद ने कुदऊ सिंह घराने की परम्परा, गया प्रसाद एवं इनके पुत्र अयोध्या प्रसाद के द्वारा आगे चलाई गई। काशी प्रसाद एवं इनके शिष्य शम्भू प्रसाद तिवारी से कुदऊ सिंह घराने की परम्परा आगे बड़ी। बाबा राम कुमार दास के द्वारा राम मोहिनी शरण एवं बाबा ठाकुर दास शिष्य तैयार किए गए। बाबा ठाकुर दास के प्रमुख शिष्य स्वामी रामशंकर पागल दास ने कुदऊ सिंह की परम्परा को अपने अनेक शिष्यों के माध्यम से प्रचारित एवं प्रसारित किया।

1.5 पं0 रामसहाय का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान

पं0 रामसहाय जी को बनारस बाज का सस्थापक माना गया है। आपके पूर्वज मूल रुप से जिला जौनपुर के अन्तर्गत गोपालपुरम ग्राम के निवासी थे। बाद में इनके पिता बनारस आकर बस गये। तबले के मुख्य रुप से पॉच बाज जैसे –पंजाब, दिल्ली, अजराडा, फर्रूखाबाद तथा लखनऊ प्रसिद्व हैं। रामसहाय जी का जन्म बनारस में सन् 1830 ई0 के लगभग हुआ। बचपन से ही जब यह दो वर्ष के थे तो वह घर में अपने चाचा का रखा हुआ तबला घंटों पीटते रहते थे। बचपन से ही इनमें विलक्षण प्रतिभा दिख रही थी। तब छोटी सी उम्र में ही तबले का पहला पाठ 'धा धा तेट, धाधा तीना' ठीक प्रकार बोलने लगे थे। कहते है उसी समय तीनताल का ठेका भी इन्हें याद हो गया। घर वाले इतनी छोटी से उम्र में तबले के प्रति इनकी ऐसी रूचि देख कर आश्चर्यचकित रह गये थे। जब इनकी उम्र पांच वर्ष की हुई तब यह अपने चाचा के शिष्य बनाये गये। इसके बाद विधिवत् इनकी तबले की शिक्षा प्रारम्भ हो गई, नौ वर्ष की उम्र तक रामसहाय इतना अच्छा तबला बजाने लगे, मानो तबले का कोई बड़ा उस्ताद बजा रहा हो। यह तबले के अभ्यास में अधिक से अधिक समय देते थे। अपने अथक परिश्रम के फलस्वरूप रामसहाय शीघ्र ही काशी के श्रेष्ठ तबला वादक माने जाने लगे। खलीफा मोदू खॉ ने लखनऊ में जब एक बार इनका तबला वादन सुना तो वह बहुत प्रभावित हुए और रामसहाय जी को तबले की शिक्षा देने के लिए तैयार हो गये। तत्पश्चात शुभ

मुहुर्त देख कर उस्ताद मोदू खॉ ने रामसहाय को अपना शिष्य बना लिया। लखनऊ में इस बात की हलचल हो गयी कि एक हिन्दू लड़के को मोदू खॉ तबले की तालीम दे रहे हैं। इसके कुछ वर्ष बाद जब मोदू खॉ अपने ससुराल चले गये तब रामसहाय उस्ताद के वहॉ ना होने पर निराश हो गये और उनकी बैठक में अकेले बैठ कर रोने लगे। उनको रोता देखे उस्ताद की बीबी ने उनसे रोने का कारण पूछा तो उन्होंने बताया कि उस्ताद के यहॉ न होने से मेंरी शिक्षा नहीं हो पायेगी यह सुनकर वह हॅसने लगी। रामसहाय को धैर्य देते हुए उन्होंने कहा कि तुम चिन्ता मत करो मेरे पिता ने मुझे पॉच सौ गते बताई थी जो मैं तुम्हें सिखा दूॅगी। तब चार महीने में पॉच सौ गते बीबी जी ने रामसहाय को सिखाई। इस बीच मोदू खॉ भी अपने ससुराल पंजाब से बनारस वापस आ गये और उनकी शिक्षा पुनः प्रारम्भ हो गयी। इस प्रकार लगभग बारह वर्षों तक रामसहाय ने मोदू खॉ से विधिवत् शिक्षा प्राप्त की। इस दौरान वह लगभग बीस–बीस घण्टे अभ्यास करते रहे और वादन शैली में निखार लाते गये।

लखनऊ में नवाब शुजाउद्दौला की मृत्यु के उपरान्त वहॉ की नवाबी जब वाजिद अली शाह को मिली तो इस खुशी के अवसर पर वहॉ संगीत का एक बड़ा समारोह किया गया तथा उसमें गायक, वादक एवं नर्तक इक्कठे हुए। इस समारोह में रामसहाय ने अपनी कला का कौशल दिखा कर श्रोताओं को मन्त्र मुग्ध कर दिया। कहा जाता है कि यह समारोह सात दिन तक चला और रामसहाय जी ने सातों दिन इस समारोह में लगातार अपना तबला वादन प्रस्तुत किया और श्रोताओं की खूब प्रशंसा प्राप्त की। मोदू खॉ ने इस बीच नवाब सहाब को सम्बोधित करते हुए कहा हुजुर यहॉ जितने भी तबला या पखावज वादक मौजूद है मैं उन लोगों से कोई रंजिश नहीं रखता। वो लोग इमान से कहें कि क्या रामसहाय के बाद कोई तबला बजा सकता है। तब नवाब सहाब के उत्तर देने से पूर्व ही सब कलाकार बोल उठे कि नहीं। अब रामसहाय का तबला सूनने के बाद हममें हौंसला नहीं कि हम अपना वादन प्रस्तुत कर सकें। उस समारोह में कुदऊ सिंह एवं भवानी सिंह भी मौजूद थे। इन दोनों ने रामसहाय जी की भुजाओं को चूमकर उनमें फूल चढ़ाये और उनको सीने से लगा लिया बुजुर्गो ने उनको आशीर्वाद दिया तथा छोटों ने उनके पैर छुए। समारोह समाप्ति के बाद नवाब सहाब ने मोदू खॉ से दूसरे दिन रामसहाय जी को लेकर इनाम लेने के लिए आने को कहा। दूसरे दिन दरबार में कलाकारों की भीड़ लग गयी। सभी को यह उत्सुकता थी कि नवाब साहब क्या ईनाम देते हैं। इसमें नवाब साहब ने अनगिनत ईनाम उनको दिया और दूसरे ही दिन दोनों गुरू–शिष्य काशी के लिए रवाना हो गये। काशी की जनता को जब यह समाचार मिला तो उन्होंने काशी में भी रामसहाय का कार्यक्रम रखा। वहॉ आपने अपनी कला प्रदर्शन द्वारा कला प्रेमियों को तृप्त किया। रामसहाय जी के छोटे भाई जानकी सहाय नृत्य किया करते थे। रामसहाय जी ने उनका नृत्य छुड़वा कर उन्हें तबले का शिष्य बनाया एवं साथ ही अन्य लोगों को भी अपना शिष्य बनाया। इस दौरान उन्होंने एक ग्रन्थ भी लिखा। उस ग्रन्थ का नाम इन्होंने 'बनारस बाज' रखा। रामसहाय जी ने अपने चाचा से कहा कि अब हमारे घराने का नया बाज 'बनारस बाज' के नाम से प्रसिद्ध होगा। इस बाज को बजाने वाला ध्रुपद, ख्याल, ठुमरी, टप्पा, सितार एवं नृत्य आदि सबके साथ कुशलता पूर्वक संगत करने के साथ, स्वतन्त्र वादन करके भी यश की प्राप्ति करेगा। तभी से 'बनारस बाज' की नींव पड़ी।

अपने पिताजी एवं चाचा की मृत्यु के बाद रामसहाय जी ने साधुवेश धारण कर लिया और इसी रूप में वह अपने शिष्यों को शिक्षा दिया करते थे। अपने भाई गौरी सहाय जी के पुत्र भैरव सहाय को उन्होंने छः वर्षों तक स्वयं शिक्षा दी। लगभग छियालीस वर्ष की आयु में रामसहाय जी का स्वर्गवास हो गया। आपके शिष्यों में जानकी सहाय, प्रताप, भगवत शरण, रघुनन्दन तथा बैजू के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। रामसहाय जी ने गुणी लोगों से सबक प्राप्त किया था। आपके द्वारा बजाये जाने वाली

परनों में सिद्ध परन, गज–परन, चक्करदार–परन, पावस–परन, कृष्ण–परन, दुर्गा–परन, हनुमान–परन, काली–परन, गणेश–परन आदि के नाम उल्लेखनीय है। इन सभी परनों की अपनी एक अलग विशेषता थी।

पं0 रामसहाय की शिष्य परम्परा में इनके भाई जानकी प्रसाद, पुत्र गौरी सहाय, भतीजा भैरो सहाय, बैजू महाराज, प्रताप महाराज, यदु नन्दन, रामशरण एवं भगत जी हैं। प्रताप महाराज से बनारस घराने की परम्परा बाचा मिश्र एवं इनके पुत्र सामता प्रसाद (गुदई महाराज) से चली। रामशरण से गामा महाराज एवं रंगनाथ मिश्र ने बनारस घराने की परम्परा को आगे बढाया। भगत जी से भैरव प्रसाद एवं इनके शिष्य पं0 अनोखे लाल ने बनारस घराने को विस्तार दिया एवं भैरो सहाय से बलदेव सहाय, इनके शिष्य कंठे महाराज एवं कंठे महाराज के पुत्र एवं शिष्य किशन महाराज ने बनारस बाज के कई शिष्य तैयार किए।

1.6 उस्ताद मुनीर खॉ का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान

उस्ताद मुनीर खॉ ने अपने समय में फर्रुखाबाद घराने का प्रतिनिधित्व किया तथा अपने शिष्यों के माध्यम से इस घराने की परम्परा को आगे बढाया। फर्रुखाबाद घराने की दो परम्पराएं मुनीर खॉ एवं मसीत खॉ द्वारा चलाई गई। आपने फर्रुखाबाद घराने के अतिरिक्त देहली घराने की भी शिक्षा प्राप्त की थी। मुनीर खॉ के शिष्य अहमदजान थिरकवा एवं हबीबुद्दीन खॉ ने भी देहली एवं फर्रुखाबाद घराने की शैली का समन्वय कर अपनी शैली विकसित की थी। सन 1863 में मुनीर खॉ का जन्म मेरठ जिले के ललियाना नामक गॉव में हुआ था। आपके पिता का नाम काले खॉ था। वह बम्बई में ही अधिकतर रहते थे। लगभग 15 वर्ष की उम्र से आपकी तबला शिक्षा उस्ताद हुसैन अली खॉ, जो हाजी विलायत अली के पुत्र थे के द्वारा आरम्भ हुई। लगभग आठ वर्षों तक इनसे तालीम पाने के पश्चात मुनीर खॉ ने उस्ताद बोली बख्श से दस–बारह वर्षों तक शिक्षा प्राप्त की। मुनीर खॉ बहुत परिश्रमी एवं लगनशील व्यक्ति थे। यह अत्यधिक रियाजी थे इस कारण इन्होंने अच्छा ताल ज्ञान प्राप्त कर लिया था। रियाज के कारण जब इनके हाथ खूब तैयार हो गये तब आप संगीत सम्मेलनों में भाग लेने के लिए बाहर जाने लगे। वहॉ तरह–तरह के कलाकारों के साथ संगत करके आपको अच्छा अनुभव प्राप्त हुआ। इस प्रकार आपने बहुत से तबला वादक की सेवा करके उनसे नया सबक, नई–नई बातें और अन्तरंग विशेषताएं हासिल की।

बम्बई तथा हैदराबाद में काफी समय तक रहने के पश्चात मुनीर खॉ रायगढ चले आये तथा बहुत समय तक रायगढ महाराज के आश्रय में रहे। अन्त में 11 सितम्बर सन 1937 को आपका देहावसान हो गया। आपके शागिर्दो में उस्ताद अहमदजान थिरकवा का नाम विशेष रुप से उल्लेखनीय रहा है। इनके शिष्यों में अमीर हुसैन खॉ, शमसुद्दीन खॉ, अल्ला मेहर, गुलाम हुसैन खॉ(भान्जे), बिजनौर के उस्ताद चॉद खॉ, हबीबुद्दीन खॉ, पानीपत के नासिर खॉ एवं विष्णु लाल शिरांडकर के नाम विशेष रुप से उल्लेखनीय हैं।

1.7 उ0 नत्थू खॉ का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान

नत्थू खॉ देहली घराने के अपने समय के प्रतिनिधि कलाकार थे। नत्थू खॉ देहली घराने के बडे काले खॉ के पौत्र एवं बोली बख्श के पुत्र थे। इनको देहली बाज विरासत में प्राप्त हुआ था। इनकी शिक्षा अपने पिता बोली बख्श के द्वारा ही हुई। नत्थू खॉ देहली के तिट एवं तिरकिट के कायदों का प्रचार करने में सिद्धहस्त थे। आपकी वादन शैली मुलायम एवं मधुर थी जो कि देहली बाज की विशेषता है। नत्थू खॉ द्वारा देहली बाज का विकास प्रचार एवं प्रसार किया गया। देश के विभिन्न क्षेत्रों से आपके पास शिक्षा ग्रहण करने के लिए शिष्य आये।

आपकी शिष्य परम्परा में रसूल खॉ, अली कादर, दमरुपानी भट्टचार्य–कलकत्ता, वासुदेव प्रसाद–बनारस, शमशुद्दीन खां, राजू खॉ–कलकत्ता, हबीबुद्दीन खॉ, अहमद जान थिरकवा एवं मोहम्मद अहमद–बम्बई आदि हैं। इनके द्वारा भी शिष्यों के माध्यम से देहली घराने की वादन शैली को प्रसारित किया गया।

1.8 उ0 जहॉगीर खॉ का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान

उस्ताद जहॉगीर खॉ का जन्म इन्दौर में सन 1864 में हुआ। आपके पिता अहमद खॉ भी तबला वादक थे। अतः इनकी तबला वादन की शिक्षा इनके पिता द्वारा ही प्रारम्भ हुई। संगीत जगत के ये ऐसे अकेले कलाकार हैं जो 112 वर्ष की उम्र तक जीवित रहे। सन 1976 में आपकी मृत्यु हुई। इन्दौर में जन्म होने के कारण आप जहॉगीर खॉ इन्दौरकर के नाम से प्रसिद्ध हुए। उस्ताद जहांगीर खॉ ने देहली, लखनऊ एवं फर्रुखाबाद घराने की वादन शैली को सिद्धहस्त किया था। इन्होंने तबले की शिक्षा नवाब फिरोज शाह जो कि बहादुर शाह जफर के पुत्र थे, से प्राप्त की थी। देहली घराने के उस्ताद छोटे खॉ से आपने देहली बाज को सीखा। फर्रुखाबाद बाज की शिक्षा आपने फर्रुखाबाद घराने के संस्थापक हाजी विलायत अली के शिष्य पटना के मुबारक अली एवं बरेली के छन्नू खॉ से प्राप्त की थी। आप बाद में लखनऊ घराने के मोहम्मद खॉ के पुत्र आबिद हुसैन के शिष्य हुए। आबिद हुसैन उम्र में यद्यपि जहॉगीर खॉ से कम थे फिर भी वे लखनऊ बाज को सीखने के लिए आबिद हुसैन खॉ के शिष्य हो गये थे। जहॉगीर खॉ की वादन–शैली में लखनऊ एवं फर्रुखाबाद बाज का विशेष प्रभाव है। 1974 में आकाशवाणी के राष्ट्रीय कार्यक्रम के अन्तर्गत गायक उस्ताद रजब अली खॉ के साथ आपका तबला संगत का कार्यक्रम प्रसारित हुआ था। लखनऊ तथा फर्रुखाबाद घराने की वादन शैली को मिलाकर आपने अपनी एक मौलिक शैली बनाई थी जिसका प्रचार एवं प्रसार आपके योग्य शिष्यों के द्वारा किया गया।

इनके प्रमुख शिष्यों में महाराष्ट्र के महबूब खॉ मिरजकर, भोपाल के स्माइल दादू, शम्भूनाथ खरगोकर, जयपुर के महेश दलवी, नारायण राव इन्दौरकर, दिनकर मजुमदार, उदयपुर के अब्दुल हाफिज एवं हैदराबाद के शेख दाऊद हैं।

1.9 आचार्य बृहस्पति का जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान

आचार्य कैलाश चन्द्रदेव बृहस्पति संगीत शास्त्रकार तथा वाग्गेयकर के रुप में संगीत जगत में प्रतिष्ठित हुए। आपका जन्म रामपुर रियासत में सन 1918 में हुआ। आप संस्कृत के मर्मज्ञ थे जो आपको विरासत में अपने पिता पंडित गोविन्द राव, दादा पंडित अयोध्या प्रसाद तथा परदादा पंडित बुद्धसेन से प्राप्त हुआ था। आपके दादा पंडित अयोध्या प्रसाद जी को व्याकरण, संस्कृत, कर्मकाण्ड, ज्योतिष एवं संगीत का ज्ञान अपने चाचा पंडित दत्तराम से प्राप्त हुआ था। आचार्य बृहस्पति को यह समस्त ज्ञान अपने दादा से एवं अपनी माता नर्मदा देवी से प्राप्त हुआ था। आपके पिता की मृत्यु तब हो गई थी जब आचार्य बृहस्पति केवल 10 वर्ष के थे। संगीत एवं संस्कृत के ज्ञान ने आपको भरत के नाट्यशास्त्र एवं शारंगदेव के संगीतरत्नाकर के लिए प्रेरित किया तथा बाद में इन दोनों ग्रन्थों की व्याख्या कर संगीत शास्त्र के विषय में व्याप्त भ्रान्तियों को दूर किया। इसके अतिरिक्त संगीत के व्यवहारिक पक्ष का अध्ययन रामपुर दरबार के प्रसिद्ध गायक मिर्जा नवाब हुसैन तथा ताल का अध्ययन रामपुर दरबार के ही प्रसिद्ध पखावज वादक पंडित अयोध्या प्रसाद से प्राप्त किया।

आचार्य बृहस्पति द्वारा भरत के श्रुति मण्डल का प्रदर्शन एवं व्याख्या की गई। यमन कल्याण और दरबारी के पृथक–पृथक रिषभ को आपके द्वारा भरत के श्रुति मण्डल में स्थापित किया गया। आचार्य बृहस्पति ने पंडित भीष्म देव वेदी के माध्यम से जातियों एवं ग्राम–रागों का प्रदर्शन किया था।

सन 1957 में तत्कालीन सूचना एवं प्रसारण मंत्री बी0 वी0 केसकर ने आकाशवाणी, जिसको कि आल इण्डिया रेडियो कहा जाता था के केन्द्रीय सलाहकार समिति में संगीत के कार्यक्रमों की गुणवत्ता एवं विकास हेतु आपको नामित किया। सत्तर के दशक में आप आकाशवाणी के मुख्य सलाहकार थे। पूर्व में आपकी कर्मस्थली कानपुर रही जहॉ आपने सनातन धर्म कालेज में धर्मशास्त्र एवं हिन्दी साहित्य की शिक्षा प्रदान की। शिक्षा का कार्य आपने सन 1965 तक किया। शिक्षण के कार्य के साथ–साथ आप संगीत के शास्त्रों के अध्ययन में लगे रहे। आचार्य बृहस्पति, दि एकेडमी आफ म्यूजिक एन्ड फाइन आर्टस कानपुर के डायरेक्टर भी रहे। आपने अपने ज्ञान का लाभ अपने शिष्यों एवं संगीत जिज्ञासुओं को भी प्रदान किया। इनके प्रमुख शिष्यों में श्रीमती सुमित्रा आनन्द पाल सिंह, गुलाम मुस्तफा एवं इनकी पत्नी सुलोचना बृहस्पति हैं। गुलाम मुस्तफा यद्यपि रामपुर–सहसवान घराने के प्रतिनिधि कलाकार हैं परन्तु इन्होंने जाति–गायन की शिक्षा के लिए आचार्य बृहस्पति का शिष्यत्व ग्रहण किया। गुलाम मुस्तफा एवं सुलोचना वृहस्पति वर्तमान में प्रतिष्ठित एवं लोकप्रिय शास्त्रीय संगीत के क्रमशः गायक व गायिका हैं। आचार्य बृहस्पति ने **भरत का संगीत शास्त्र** तथा **संगीत चिन्तामणि** जैसे दो सारगर्भित ग्रन्थों की रचना कर संगीत जगत को प्रदान किये। इसके अतिरिक्त आपके संगीत पर शोध लेख भी प्रकाशित होते रहे तथा संगीत की सेमीनारों में आपने अविस्मरणीय व्याख्यान दिये।

अभ्यास प्रश्न

1 पं0 शारंगदेव द्वारा रचित ग्रन्थ का नाम लिखिए।
2 कुदऊ सिंह के दो प्रमुख शिष्यों के नाम लिखिए।
3 पं0 राम सहाय के गुरु का नाम बताइए।
4 उ0 मुनीर खॉ के गुरु एवं किन्हीं दो प्रमुख शिष्यों के नाम लिखिए।

5 उ0 नत्थु खॉ के पिता एवं इनके घराने का नाम लिखिए।
6 उ0 जहांगीर खॉ के दो घरानों का नाम लिखिए।

1.10 सारांश

भारतीय शास्त्रीय संगीत में शास्त्र का ज्ञान एवं इसके कियात्मक स्वरुप को जानना एवं प्रस्तुत करना दोनों ही सफल संगीतज्ञ के लिए आवश्यक है। जिन मनीषियो ने प्राचीन ग्रन्थों के आधार पर संगीत की सरल भाषा में व्याख्या की एवं जिन संगीत कलाकारो द्वारा कई वर्षों की कठिन साधना के पश्चात वादन शैली को विकसित किया, प्रत्येक संगीत के छात्र एवं संगीत जिज्ञासु को इनके विषय में जानना अति आवश्यक है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप प्राचीन संगीत शास्त्रकार पं0 शारंगदेव एवं आधुनिक शास्त्रकार आचार्य बृहस्पति के विषय में एवं इनके द्वारा रचित संगीत के ग्रन्थो के विषय में परिचय प्राप्त कर चुके होंगे। संगीत कलाकारों की जीवन शैली एवं उनके शिष्यों की परम्परा के विषय में भी आप जान गए हैं। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप संगीत के ग्रन्थों के अध्ययन की प्रेरणा प्राप्त करेंगे एवं संगीत कलाकारो की जीवन शैली से प्रेरणा प्राप्त कर सफल संगीतकार बनने की दिशा में प्रयास करेंगे।

1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. शारंगदेव 2. राम प्रसाद (भाई), बाबा राम कुमार दास (अयोध्या) 3. गुरु उ0 मोदू खॉ
4. गुरु उ0 हुसैन अली, शिष्य उ. अमीर हुसैन खॉ(भान्जे), उ. अहमद जान थिरकवा
5. बोली बख्श, देहली घराना 6. लखनऊ एवं फर्रुखाबाद घराना

1.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मिस्त्री, आबान ई0, पखावज और तबला के घराने एवं परम्पराएं, स्वर साधना समिति, एनेक्स जम्बुलबाडी, मुम्बई।
2. गर्ग, लक्ष्मी नारायण, हमारे संगीत रत्न, संगीत कार्यालय, हाथरस।

1.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. अपने पाठ्यक्रम के किसी संगीत शास्त्रकार के जीवन परिचय एवं भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान पर प्रकाश डालिए।
2. कुदऊ सिंह का जीवन परिचय एवं उनके भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान पर प्रकाश डालिए।
3. अपने पाठ्यक्रम के किसी तबला वादक की जीवनी एवं उनके भारतीय शास्त्रीय संगीत में योगदान पर चर्चा कीजिए।

इकाई 2 – संगीत के प्रसिद्ध ग्रन्थों (संगीत रत्नाकर, चतुर्दण्डीप्रकाशिका, नारदीय शिक्षा, संगीत मकरंद, संगीत चिन्तामणि, संगीतांजलि एवं संगीत–पारिजात) का सामान्य अध्ययन

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 विभिन्न कालों के सांगीतिक ग्रंथ
2.4 संगीत रत्नाकर ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन
2.5 चतुर्दण्डीप्रकाशिका ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन
2.6 नारदीय शिक्षा ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन
2.7 संगीत मकरंद ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन
2.8 संगीत चिन्तामणि ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन
2.9 संगीतांजलि ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन
2.10 संगीत पारिजात ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन
2.11 सारांश
2.12 शब्दावली
2.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची
2.15 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.16 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर (एम0पी0ए0एम0टी0–606) पाठ्यक्रम की दूसरी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप विद्वान संगीतज्ञों के महत्वपूर्ण योगदान तथा उनकी संगीत साधना के प्रति लगन एवं परिश्रम को जान गए हैं।

प्रस्तुत इकाई में संगीत के ग्रन्थों के बारे में बताया गया है। वैदिक काल के अन्तिम काल खण्ड तक संगीत से सम्बन्धित कोई स्वतंत्र ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। वेदों में ऋग्वेद में गीत, वाद्य और नृत्य के विषय की चर्चा मिलती है। सामवेद में सबसे अधिक गायन से सम्बन्धित चर्चा की गई है। इसके पश्चात संगीत से सम्बन्धित अनेक ग्रन्थों की रचना हुई। प्राचीन एवं मध्यकालीन ग्रंथकारों ने भारतीय संगीत पद्धति के विविध पक्षों को अपने विशिष्ट सांगीतिक ज्ञान से किस प्रकार उजागर किया है यह भी इस इकाई में वर्णित है। मध्यकाल के प्रमुख ग्रंथकारों जैसे नारद, पं0 शारंगदेव, पं0 अहोबल, पं0 श्रीनिवास, पं0 व्यंकटमुखी, पं0 रामामात्य आदि ने विशेष रुप से संगीत के विविध पक्षों को अपने ग्रन्थों में स्थान देकर यह सिद्ध किया है कि प्राचीन एवं मध्यकाल में भी संगीत के विविध पक्ष विकसित अवस्था में थे। इस इकाई में नारदीय शिक्षा, संगीत–मकरंद, चतुर्दण्डीप्रकाशिका, संगीत–रत्नाकर, संगीत–पारिजात, संगीतांजलि, संगीत–चिन्तामणि ग्रन्थों का अध्ययन प्रस्तुत है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप प्राचीन, मध्य एवं आधुनिक कालीन ग्रंथों के महत्व को समझ सकेंगे तथा इन ग्रंथों में उपलब्ध सामग्री का समयक विश्लेषण कर सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

- बता सकेंगे कि प्राचीन एवं मध्यकालीन समय में संगीत का क्या अस्तित्व था?
- बता सकेंगे कि वर्तमान में स्वर, राग, जाति, ताल इत्यादि मूल सांगीतिक तत्वों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि क्या है?
- समझा सकेंगे कि संगीत के अन्तर्गत स्वर, राग, गायन शैलियों का स्वरूप किस प्रकार शनै–शनै विकसित हुआ है।
- गायन, वादन एवं नृत्य के विषय में प्राचीन संगीत मनीषियों के ज्ञान एवं विचारों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- समझा सकेंगे कि ग्रन्थों के अन्तर्गत संस्कृत साहित्य में संगीत के विकास की कढ़ियाँ स्पष्ट रूप से पाई जाती हैं।

2.3 विभिन्न कालों के सांगीतिक ग्रंथ

भारतीय संगीत की उत्पत्ति किस समय हुई यह बतलाना कठिन है। संगीत की उत्पत्ति के विषय में अनेक किवदन्तियाँ सुनने में आती हैं। अनेक प्रकार के मत भी सामने आते हैं जिनमें कुछ ने ब्रह्मा जी तथा कुछ ने शिव, सरस्वती को संगीत का अविष्कारक माना है। संगीत अनादिकाल से चला आ रहा है। जिसका उद्देश्य आत्म उत्थान एवं ईश्वर प्राप्ति माना गया है। संगीत सदा संस्कृति का संगी रहा है। संगीत के इतिहास को संस्कृति के इतिहास से अलग नहीं किया जा सकता है। भरत, नारद, मतंग, शारंगदेव, पं0 व्यंकटमुखी, पं0 अहोबल तथा रामामात्य आदि की कृतियाँ संगीत की दृष्टि से महत्वपूर्ण रही हैं। भरत कृत 'नाट्यशास्त्र' संगीत एवं नाट्य का विश्वकोश है। स्वर के सूक्ष्मतम रूप श्रुति की व्याख्या सर्वप्रथम इसी ग्रन्थ में पायी जाती है। इसके पश्चात मतंग कृत 'बृहद्देशी' में विभिन्न

प्रदेशों में प्रचलित संगीत शैलियों पर प्रकाश डाला गया है तथा वर्तमान संगीत में महत्वपूर्ण 'राग' नामक वस्तु का विवेचन भी सर्वप्रथम इसी ग्रंथ में पाया गया है। इसके पश्चात शारंगदेव कृत संगीत रत्नाकर ग्रंथ उत्तरी एवं दक्षिणी संगीत दोनों के लिए महत्वपूर्ण ग्रंथ माना जाता है। गायन, वादन, नृत्य इन तीनों कलाओं का पूर्ण विवरण इस ग्रंथ में मिलता है।

मध्यकाल तक सभ्यता के सभी युगों में संगीत की उन्नत अवस्था का परिचय प्राप्त होता है जिसमें गायन, वादन, नृत्य और नाट्य को आवश्यकतानुसार महत्व एवं प्रश्रय प्राप्त था। अतः विभिन्न कालों में लिखित ग्रन्थों में जो संगीत के सिद्धान्त और नियम बताए गए हैं वे अब भी मान्य हैं।

2.4 संगीत रत्नाकर ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन

संगीत–रत्नाकर भारतीय शास्त्रीय संगीत में प्राचीन ग्राम–मूर्च्छना प्रणाली से सम्बन्धित संगीत विद्या का प्रतिपादक, अन्तिम आधार ग्रन्थ है। इसके रचयिता आचार्य शारंगदेव हैं। इसका रचनाकाल सन् 1210 से 1247 ई0 के मध्य का माना जाता है। शारंगदेव के पूर्वज कश्मीर के मूल निवासी थे जो कालान्तर में आव्रजन द्वारा जैत्रपद (दक्षिण भारत) में बस गए। जैत्रपद के राजा सिधण के संरक्षण में इन्हें संगीत–विद्या को पुष्पित–पल्लवित करने का अनुकूल वातावरण प्राप्त हुआ। संगीत–रत्नाकर' में निम्नलिखित सात अध्याय हैंः–

1. स्वराध्याय, 2. रागविवेकाध्याय, 3. प्रकीर्णाध्याय, 4. प्रबन्धाध्याय, 5. तालाध्याय, 6. वाद्याध्याय और 7. नृत्याध्याय।

संगीत–रत्नाकर में वर्णित सातों अध्यायों का विवरण निम्नवत् हैः–

1 स्वराध्याय – स्वराध्याय को आठ प्रकरणों में विभक्त किया गया है। पदार्थ संग्रह नामक खण्ड के प्रारम्भिक 14 श्लोकों में लेखक ने अपना एवं अपने आश्रयदाता का परिचय दिया है। इसके बाद संगीत की परिभाषा 'गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते' देकर संगीत के दो भेद 'मार्गी' और 'देशी' कहे गए हैं।

श्रुति – श्रुतियाँ बाईस होती हैं। हमारे शरीर में बाईस–बाईस नाड़ियाँ जो हद्य, कण्ठ और मूर्धा में होती हैं, उनसे वायु टकराती हुई बाईस श्रुतियों को उत्पन्न करती हैं। सारणा–चतुष्टयी द्वारा श्रुतियों को नवीन विधि से संगीत–रत्नाकर में समझाया गया है। **स्वर–** षड्ज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत, निशाद आदि सात स्वर हैं जिनको व्यवहार में सा, रे, ग, म, प, ध, नि संज्ञाएँ दी गई हैं। स्वर की परिभाषा देते हुए शारंगदेव का कथन है कि–'श्रुत्यनन्तर भावी, स्निग्ध, श्रोताओं के चित का स्वयं रंजन करने वाला नाद, स्वर कहलाता है।' चौथी, सातवीं, नौवीं, तेरहवीं, सत्रहवीं, बीसवीं, और बाइसवीं श्रुतियों पर सा, रे, ग, म, प, ध, नि शुद्ध स्वर स्थापित (स्थित) हैं। बारह विकृत स्वरों का वर्णन किया गया है

ग्राम–मूर्च्छना – ग्राम की परिभाषा देते हुए कहा गया है कि–

'ग्रामः स्वरसमूहः स्यानमूर्च्छनोदेः समाश्रयः।'

अर्थात् स्वरों का वह समूह जो मूर्च्छनाओं का आश्रय है ग्राम कहलाता है। पृथ्वी पर दो ही ग्राम – 'षड्ज–ग्राम' व 'मध्यम–ग्राम' कहे गए हैं। शारंगदेव ने संगीत–रत्नाकर में नारद के मत से गांधार–ग्राम का भी वर्णन किया है। तीनों ग्रामों की 21 मूर्च्छनाएँ हैं। उनके नाम उत्तरमन्द्रा, रजनी आदि दिए गए हैं।

2. राग विवेकाध्याय – इस अध्याय में दो सौ चौसठ रागों का वर्णन किया गया है। सर्वप्रथम पाँच प्रकार के ग्राम–राग हैं जो गीतियों पर आधारित हैं। इन गीतियों के नाम इस प्रकार हैं:– शुद्धा, भिन्ना, गौड़ी, बेसरा और साधारणी। ग्राम–राग और देशी–राग में ग्राम–राग के अन्तर्गत 30 ग्राम–राग, 8 उपराग, 20 राग, 96 भाषा, 20 विभाषा और 4 अन्तरभाषा हैं। भाषा, विभाषा और अन्तरभाषा इनको पन्द्रह जनक भाषाओं में वर्गीकृत किया गया है। दूसरे प्रकरण में रागाम्, भाषाम्, क्रियाम् और उपांग कहे गए हैं।

3. प्रकीर्णाध्याय – इस अध्याय में उन पारिभाषिक शब्दों को रखा गया है जो किसी अन्य अध्याय में नहीं वर्णित किए जा सकते थे। जैसे गायक के गुण–दोष, शब्द के गुण–दोष, गमक के पन्द्रह प्रकार, स्थाय भेद, आलप्ति, वृन्दगान आदि ग्यारह पारिभाषिक शब्दों को इस अध्याय में स्थान दिया गया है। संगीत–रत्नाकर में आवाज के गुण–दोष को आयुर्वेद के धातुओं से समझाया गया है कि वात, पित्त, कफ़ और सन्निपात इन चार धातुओं के सन्तुलन से शरीर स्वस्थ रहता है।

4. प्रबन्धाध्याय – संगीत–रत्नाकर के इस अध्याय में प्रबन्ध का वर्णन है। प्रबन्ध यानी बन्दिश, जिसे वस्तु या रुपक भी कहा गया है। किसी भी बन्दिश के गेय भाग को धातु और पद (गीत) भाग को अंग कहा गया है। छह अंगों से लेकर दो अंगों वाले प्रबन्ध की पाँच जातियाँ – मेदिनी, आनन्दिनी, दीपनी, भावनी और तारावली दी गई हैं। दो धातु वाले, तीन धातु वाले या चार धातु वाले प्रबन्धों के तीन भेद दिए गए हैं। शारंगदेव ने प्रबन्धों के तीन वर्ग बताए हैं – सूड, आलिक्रम, विप्रकीर्ण।।

आलिक्रम के प्रबन्ध में चौबीस प्रकार कहे गए हैं, साथ ही सूड के आठ प्रकारों को मिलाकर बत्तीस संख्या भी दी गई है।

5. तालाध्याय – इस अध्याय के मार्गताल और देशीताल ये दो भाग किए गए हैं। मार्गताल पाँच कहे गए हैं– 1. चच्चत्पुट, 2. चाचपुट 3. षटपितापुत्रक, (इसके दो और भी नाम हैं– पंचपाणि और उत्तर), 4. उद्धट् और 5.सम्पक्वेश्टाक। इनके एककल, द्विकल और चतुश्कल का सम्बन्ध क्रमशः चित्र, वार्तिक और दक्षिण मार्ग से जोड़ा गया है। चौदह गीतकों का विस्तृत वर्णन दिया गया है।

6. वाद्याध्याय – वाद्याध्याय के अन्तर्गत वाद्य के चार भेद बताए गए हैं – 1. तत वाद्य, 2. सुषिर वाद्य, 3. अवनद्य वाद्य और 4. घनवाद्य।

7. नृत्याध्याय – पण्डित शारंगदेव ने नृत्य का विशद विवेचन किया है। नृत्याध्याय के अन्तर्गत निम्न बिन्दुओं पर विचार किया गया है – नाट्य की उत्पत्ति, अभिनय के भेद, नृत्य एवं नृत का लक्षण, आडिक अभिनय के भेदों में : सिर के चौदह, हाथ के सरसठ, वक्ष के पाँच, पार्श्व के पाँच, कटि के पाँच एवं चरण के तेरह भेदों का उल्लेख किया गया है। इसी प्रकार अन्य सभी अंगों के भी अलग–अलग मुद्राओं का विस्तृत वर्णन किया है। जैसे ग्रीवा के नौ, बाहु के बावन, दृष्टि के छत्तीस भेद आदि।

हमारा विषय नृत्य नहीं है। यहाँ मूल ग्रन्थ संगीत रत्नाकर के नृत्याध्याय की विषय–सूची के आधार पर परिचय मात्र दिया गया है। आचार्य शारंगदेव ने संगीत–रत्नाकर नामक विशाल ग्रन्थ इतने विश्वास से लिखा है कि उसमें कहीं भी सन्देह नहीं है। इसलिए शारंगदेव अपने आपको निःशंक कहते हैं। उन्होंने संगीत सम्बन्धी ज्ञान ऐसा प्रस्तुत किया कि यह ग्रन्थ परवर्ती ग्रन्थकारों का आधार ग्रन्थ बन गया। आज भी संगीत सम्बन्धी ग्रन्थ बिना संगीत–रत्नाकर की सहायता के लिखा ही नहीं जा सकता।

2.5 चतुर्दण्डीप्रकाशिका ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन

कर्नाटक संगीत का यह सर्वोत्तम ग्रन्थ माना जाता है। इसकी रचना सन् 1620 ई0 में हुई थी। इसके रचनाकार पं0 व्यंकटमुखी है। यह ग्रन्थ अपने रचनाकाल से ही संगीत जगत में छा गया था जिससे इसकी महत्ता स्वतः सिद्ध है। 72 मेलों और विकृत स्वरों की अधिकतम संख्या की स्पष्ट अवधारणा के कारण चतुर्दण्डीप्रकाशिका विद्वानों के मध्य प्रारम्भ से ही सम्मान पाता रहा है। पं0 भातखण्डे जी भी चतुर्दण्डीप्रकाशिका से बहुत प्रभावित थे। जिस प्रकार इस ग्रन्थ के माध्यम से दक्षिणी संगीत व्यवस्थित हुआ है उसी प्रकार पं0 भातखण्डे जी उत्तरी–संगीत भी व्यवस्थित करना चाहते थे। भातखण्डे जी ने थाट–राग वर्गीकरण, सप्तक में सात शुद्ध–स्वरों और पाँच विकृत–स्वरों की अवधारणा व्यंकटमुखी से ही प्राप्त की है।

जिस समय इस ग्रन्थ की रचना हुई उस समय संगीत के मुख्य चार आधार माने जाते थे जिन्हें दण्ड कहा जाता था। इस ग्रन्थ में उन चार दण्डों पर विधिवत प्रकाश डाला गया है, इसीलिए पं0 व्यंकटमुखी ने इसका नाम चतुर्दण्डी रखा। वे चार दण्ड थे – आलाप, ठाय (स्थाय), गीत व प्रबन्ध। गोपाल नायक के एक ध्रुपद में कहा गया है – ''चारों दंड बाँध लाए'' अर्थात् गोपाल नायक को इन चारों दण्डों पर पूर्ण अधिकार था।

इस ग्रन्थ में दस अध्याय या प्रकरण हैं जो इस प्रकार हैं – 1 वीणा–प्रकरण, 2 श्रुति–प्रकरण, 3 स्वर–प्रकरण, 4 मेल–प्रकरण, 5 राग–प्रकरण, 6 आलाप–प्रकरण, 7 ठाय–प्रकरण, 8 गीत–प्रकरण, 9 प्रबन्ध–प्रकरण और 10 ताल–प्रकरण।

1. वीणा–प्रकरण – वीणाएँ तीन प्रकार की कही गई हैं:–

1. शुद्धमेल–वीणा, 2. मध्यमेल–वीणा, 3. रघुनाथेन्द्र–वीणा।

वीणा पर चार तार लगाने का विधान किया है। शुद्ध मेल वीणा के विषय में कहा है–बाएं ओर से प्रथम तार मन्द्र–षड्ज में, दूसरा मन्द्र–पंचम में, तीसरा मध्य–षड्ज और चौथा मध्य–मध्यम में मिलाने का निर्देश है। इन चार तारों के अतिरिक्त तीन और तार पार्श्व में कहे गए हैं जिनको क्रमशः तार–षड्ज, मध्य–पंचम और मध्य–षड्ज में मिलाने का विधान दिया है।

2. श्रुति–प्रकरण – सर्वप्रथम श्रुति और स्वर के भेद का स्पष्टीकरण किया गया है। स्वर्ण और उससे बने आभूषणों में जो अन्तर है, वही श्रुति और स्वर में कहा गया है। प्राचीन ग्रन्थकार भरतादि के अनुसार व्यंकटमुखी ने बाइस श्रुतियाँ स्वीकार की हैं। बाइस श्रुतियों में स्वरों का विभाजन करते हुए कहा है कि षड्ज से तीसरी श्रुति पर शुद्ध–ऋषभ, शुद्ध–ऋषभ से दूसरी श्रुति पर शुद्ध–गांधार, शुद्ध–गांधार से मध्यम की चार श्रुतियाँ हैं, जिनमें से प्रथम पर साधारण–गांधार, साधारण–गांधार से दूसरी श्रुति पर अन्तर–गांधार और अन्तर–गांधार से एक श्रुति पर शुद्ध–मध्यम कहा है। शुद्ध–मध्यम से चार श्रुति का पंचम विद्वानों ने माना है, जिनमें से तीसरी श्रुति पर वराली–मध्यम, वराली–मध्यम से एक श्रुति पर पंचम, पंचम से तीसरी श्रुति पर शुद्ध–धैवत, शुद्ध–धैवत से दूसरी श्रुति पर शुद्ध–निशाद है। षड्ज चार श्रुति का कहा गया है, जिसमें पहली श्रुति पर कैशिक–निशाद, कैशिक–निशाद से दूसरी श्रुति पर काकली–निशाद और काकली–निशाद से एक श्रुति पर स्वयं षड्ज विद्यमान है।

3. स्वर–प्रकरण – यह अध्याय सबसे महत्वपूर्ण है। व्यंकटमुखी ने स्वर प्रकरण में मुखारी राग के स्वरों को शुद्ध माना है। जिसके स्वर हिन्दुस्तानी संगीत के अनुसार सा रे रे म प ध ध सां होता है। उसका श्रुति विभाजन करते हुए कहा है–

चतुश्चतुश्चतुश्चैव षड्ज मध्यम पंचमाः।।
द्वे–द्वे निशादगांधारो तिस्त्री ऋषभधैवतो।

अर्थात् षड्ज, मध्यम, पंचम की चार–चार, गांधार, निशाद की दो–दो एवं ऋषभ, धैवत की तीन–तीन श्रुतियाँ हैं। सात शुद्ध व पाँच विकृत स्वर ग्रन्थकार ने माने हैं। लेखक का कथन है कि संगीत–रत्नाकर में 12 विकृत स्वर माने गए हैं। रामामात्य और सोमनाथ जो कि चतुर्दण्डी प्रकाशिका के पूर्व के ग्रन्थकार हैं, का नाम लिए बिना चतुर्दण्डी में कहा गया है कि कुछ लोग सात विकृत स्वर मानते हैं पर चतुर्दण्डी प्रकाशिका में कुल पाँच ही विकृत स्वर माने गए हैं, जिनके नाम है – 1. साधारण–गांधार, 2. अन्तर–गांधार, 3. वराली–मध्यम, 4. कैशिक–निषाद, 5. काकली–निशाद।

शुद्ध–गांधार जब नौवीं श्रुति से एक श्रुति ऊँचा होकर दसवीं श्रुति पर जाता है तो साधारण–गांधार हो जाता है और वही दो श्रुति और ऊँचा होकर बारहवीं श्रुति पर अन्तर–गांधार कहलाता है, गांधार के ये दो विकृत–रुप हुए। मध्यम का एक विकृत–रुप है जो कि पंचम की तीसरी श्रुति पर तथा शुद्ध–मध्यम से तीन श्रुति ऊँचा है एवं आरम्भ से सोलहवीं श्रुति पर है। इसे इन्होंने एक नया नाम वराली–मध्यम दिया।

4. मेल–प्रकरण – इस प्रकरण में व्यंकटमुखी ने एक सप्तक में 72 मेल दिए जो कि अब तक के किसी भी ग्रन्थ में उल्लिखित मेलों से अधिक हैं। इन्हीं 72 मेलों के कारण यह ग्रन्थ अधिक ख्याति प्राप्त कर सका है। पं0 भातखण्डे जी ने भी इन्हीं 72 मेलों में से उत्तरी भारतीय संगीत पद्धति के लिए उपयुक्त दस थाट स्वीकार किए हैं।

पूर्वांग के प्रत्येक अर्धमेल के साथ उत्तरांग के सभी छहों अर्धमेलों को क्रमानुसार मिलाने पर छह पूर्णमेल तैयार होंगे।। इसी प्रकार क्रमशः दूसरे, तीसरे, चौथे आदि के प्रत्येक पूर्वांग के साथ उत्तरांग के अर्धमेलों को जोड़ने से 6×6=36 पूर्णमेल तैयार हो जाएँगे। इन सभी मेलों में 'शुद्ध–मध्यम' है। अब यदि 'शुद्ध–मध्यम' के स्थान पर 'तीव्र–मध्यम' कर दिया जाए तो पुनः 36 और नवीन मेल तैयार हो जाएँगे। अतः इस प्रकार कुल 36+36=72 मेल तैयार हो सकेंगे।

5. राग–प्रकरण – उस समय में प्रचलित रागों को 72 में से केवल 19 मेलों में वर्गीकृत किया गया है। जिस प्रकार उत्तर में अधिकतम 32 थाट हो सकते हैं पर प्रयोग में केवल 10 थाट ही आते हैं उसी प्रकार व्यंकटमुखी ने 72 में से केवल 19 मेलों को ही माना है।

6. आलाप–प्रकरण – इस अध्याय में राग विस्तार में आने वाले शब्दों पर विचार किया गया है, जैसे– आलाप, तान, करण, आक्षिप्तिका, वर्धनी, विदारी, मुक्तायि आदि। सम्पूर्ण, षाडव और औडव जातियों के स्वरों की संख्या के विषय में परम्परा से हट कर सात, छह और पाँच स्वर के स्थान पर आठ, सात और छह स्वर कहा गया है।

7. ठाय (स्थाय) प्रकरण – यह अध्याय चतुर्दण्डी–प्रकाशिका का सबसे संक्षिप्त अध्याय कहा जा सकता है, क्योंकि इस अध्याय में कुल सात श्लोक हैं। 'ठाय' का अर्थ है 'स्थाय'। राग का विस्तार करते समय भिन्न–भिन्न स्वरों को स्थायी मान कर किसी कल्पित स्थायी स्वर से चार स्वर आरोह में तथा चार ही स्वर अवरोह में, को प्रयोग करते समय चार–चार तानें बनाना ठाय (स्थाय) कहलाता था।

8. गीत–प्रकरण – व्यंकटमुखी ने संगीत में वर्णित प्रबन्धों के दो भाग करके गीत और प्रबन्ध नामक दो अध्याय बना दिए हैं। प्रबन्धों के सालग सूड, जो कि सूड के दो प्रकार कहे गए हैं उनमें से सालग को अलग कर दिया जिसे गीत–प्रकरण कहा गया है। छायालग नाम का रुपान्तर ही सालग है। इस अध्याय में सात प्रकार के गीत गिनाए गए है, जिनके नाम इस प्रकार हैं– 1. ध्रुव, 2. मट्ठ, 3. प्रतिमट्ठ, 4. निसारुक, 5. अट्टताल, 6. रास और 7. एकताली। इन सब गीत–प्रकारों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

2.6 नारदीय शिक्षा का सामान्य अध्ययन

प्राचीन कालीन के इन प्राप्त शिक्षा ग्रन्थों में से नारद रचित नारदीय शिक्षा का अपना विशिष्ट स्थान है। प्रायः सभी शिक्षा ग्रन्थों में वैदिक साहित्य के पठन व उच्चारण सम्बन्धी शिक्षा के उल्लेख प्राप्त होते हैं। परंतु नारदीय शिक्षा का वैशिष्ट्य यह है कि सामवेद से सम्बद्ध होने के कारण इस ग्रन्थ में वैदिक मन्त्रों के उच्चारण के अतिरिक्त उनके गान से सम्बद्ध तत्वों का भी उल्लेख किया गया है। अतः इस ग्रन्थ में प्राप्त होने वाले सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह हैं कि इसमें वैदिक संगीत के अतिरिक्त लौकिक संगीत की भी चर्चा प्राप्त होती है।

नारद द्वारा रचित पूर्वोक्त सभी संगीत विषयक ग्रन्थों में, 'नारदीय शिक्षा' ग्रन्थ प्राचीनतम् ग्रन्थ है तथा प्रस्तुत पुस्तक इसी ग्रन्थ में वर्णित विभिन्न सांगीतिक तथ्यों पर आधारित है।

वैदिक संगीत – नारदीय शिक्षा ग्रन्थ मूलतः दो भागों में विभक्त है– 'प्रथम प्रपाठक' तथा 'द्वितीय प्रपाठक'। प्रथम प्रपाठक मुख्यतया लौकिक संगीत एवं वैदिक संगीत से सम्बद्ध है तथा द्वितीय प्रपाठक में मुख्य रुप से वैदिक स्वर उच्चारण से सम्बद्ध तत्व निहित हैं। नारदीय शिक्षा का प्रत्येक प्रपाठक पुनः आठ–आठ उपखण्डों में विभक्त है जो 'कण्डिका' कहलाते हैं। इस ग्रन्थ के प्रथम प्रपाठक की प्रथम कण्डिका में ग्रन्थकार ने सर्वप्रथम तीन वैदिक स्वरों उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित का उल्लेख किया है। तत्पश्चात् शिक्षाकार ने, वैदिक गान अर्थात् साम गान करने वाली भिन्न–भिन्न वैदिक शाखाओं द्वारा प्रयुक्त किए जाने वाले वैदिक स्वरों का उल्लेख किया है। ये वैदिक स्वर पूर्वोक्त उदात्तादि वैदिक स्वरों से पृथक् हैं। द्वितीय कण्डिका में शिक्षाकार ने स्वर–मण्डल का उल्लेख करने के पश्चात् सप्त लौकिक स्वरों का नामोल्लेख तथा तीन ग्राम व इक्कीस मूर्च्छनाओं का वर्णन किया है। इसके अतिरिक्त इसी कण्डिका में सप्त लौकिक स्वरों का, विभिन्न जीवों का प्रियत्व का भी उल्लेख किया गया है। तृतीय कण्डिका में पूर्ण रुप से गान के दस गुणों तथा चौदह गीति दोषों का वर्णन किया गया है। चतुर्थ कण्डिका में सप्त लौकिक स्वरों के रंगों व वर्ण–धर्म जाति तथा सप्त ग्रामरागों की चर्चा की गई है। पंचम कण्डिका में शिक्षाकार ने सर्वप्रथम वैदिक संगीत अर्थात् साम गान के स्वरों तथा लौकिक स्वरों की तुलना की है। उसके पश्चात् विभिन्न जीवों से सप्त लौकिक स्वरों की उत्पत्ति तथा शरीरगत स्थानों से सप्त लौकिक स्वरों की उत्पत्ति का वर्णन किया है। तत्पश्चात् इसी कण्डिका मे सप्त लौकिक स्वरों की व्युत्पत्ति का भी उल्लेख किया गया है। इसके अतिरिक्त इन्हीं स्वरों के गायकों तथा देवताओं का भी इस कण्डिका में उल्लेख किया गया है। शष्ठी कण्डिका में शिक्षाकार ने गात्र वीणा का उल्लेख करने के पश्चात् श्रुति पर भी कुछ वर्णन तथा कुछ इतर सांगीतिक तत्वों की भी चर्चा की है। सप्तमी कण्डिका में साम स्वर की शरीरगत स्थानों से उत्पत्ति, उनकी गात्र वीणा पर स्थिति, उनसे विभिन्न जीवों की सम्पुष्टि तथा पांच प्रकार की श्रुतियों अथवा श्रुति जातियों के वर्णन प्राप्त होते हैं। प्रथम प्रपाठक की अंतिम अष्टमी कण्डिका में शिक्षाकार ने आर्चिक के तीनों स्वरों का नामोल्लेख करने के पश्चात् वैदिक वर्णोच्चार का वर्णन किया है।

नारदीय शिक्षा का द्वितीय प्रपाठक पूर्णतया वैदिक वर्णोच्चार का ही ज्ञान कराता है। परंतु इस प्रपाठक की कुछ कण्डिकाओं में इससे इतर सांगीतिक तत्वों के वर्णन भी प्राप्त हो जाते हैं जिनका संगीत से सीधा सम्बन्ध तो नहीं है परंतु संगीत में उनकी कुछ उपयोगिता अवश्य है।

श्रुति स्वर – शिक्षाकार ने नारदीय शिक्षा में, यद्यपि श्रुति की परिभाषा अथवा व्याख्या नहीं दी है तथापि उन्होंने भी श्रुति को महत्व दिया है। इसी प्रकार यद्यपि शिक्षाकार ने श्रुति–संख्या का भी उल्लेख नहीं किया। तथापि ग्रामोल्लेख, साधारण स्वरोल्लेख तथा पंचम व धैवत की ह्रास एवं वृद्धि विषयक उल्लेखों से आभास होता है कि शिक्षाकार को बाईस श्रुतियों का ज्ञान था।

शिक्षाकार ने पांच श्रुति जातियों का भी नामोल्लेख किया है, परंतु वे श्रुति–जातियाँ अधिक स्पष्ट नहीं हैं। शिक्षाकार ने श्रुति जातियों पर चर्चा करते हुए कहा है कि आयता जाति का प्रयोग नीचे के स्वरों में, मृदु जाति का उसके विपरित अर्थात् उच्च स्वरों में तथा मध्या जाति का प्रयोग अपने स्वर में अर्थात् समान स्वरों में होता है। इस कथन से तात्पर्य यह भी हो सकता है कि अनुदात्त स्वरों में आयता, उदात्त में मृदु तथा स्वरित स्वरों में मध्या श्रुति–जाति का प्रयोग होता है। परंतु श्रुति जातियों का प्रयोजन एवं उनके वास्तविक लक्षण अथवा स्वरुप के वर्णन प्राप्त न होने के कारण शिक्षाकारोक्त श्रुति–जातियाँ स्पष्ट नहीं हो पाती। शिक्षाकार ने वैदिक स्वरों के अन्तर्गत भी श्रुति–जातियों का उल्लेख किया है। इसके अंतर्गत शिक्षाकार ने द्वितीय स्वर (वेणु का गान्धार) की श्रुति जातियाँ–मृदु, मध्या तथा आयता बताई हैं। यदि वैदिक संगीत का द्वितीय स्वर, लौकिक संगीत का गान्धार है, जैसा सामान्यतया माना जाता है, तब यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि गान्धार स्वर द्विश्रुतिक स्वर है। इस प्रकार उपरोक्त कथन में यह भी स्पष्ट नहीं होता कि द्वितीय स्वर गान्धार है अथवा लौकिक संगीत का द्वितीय स्वर–ऋषभ।

नारदीय शिक्षा में वर्णित स्वरोल्लेखों के इस अध्ययन से ज्ञात होता है कि तत्कालीन संगीत दो भिन्न–भिन्न धाराओं – वैदिक संगीत तथा लौकिक संगीत में प्रचलित था। तत्कालीन समाज में इन दोनों प्रकार की संगीत शैलियों का प्रचार था तथा लौकिक संगीत को प्राचीन गौरवमय वैदिक परम्परा से सम्बद्ध करने की प्रथा का चलन था। इसी क्रम में वैदिक संगीत के स्वरों तथा लौकिक संगीत के स्वरों की नारदीय शिक्षा में तुलना की गई। इसी प्रकार लौकिक स्वरों की जातियों, उनके वर्ण, गायक, शरीरगत उत्पत्ति स्थान, देवता आदि उल्लेखों से भी यही संकेत प्राप्त होते हैं।

ग्राम–मूर्च्छना – नारदीय शिक्षा में वर्णित ग्राम, मूर्च्छना तथा तान के अध्ययन से ज्ञात होता है कि यद्यपि शिक्षाकार ने तीन ग्रामों का नामोल्लेख किया है, तथापि उनका स्वरुप वर्णन व ग्राम की परिभाषा का उल्लेख, शिक्षाकार ने नहीं किया है। परंतु स्वरों के देवता का वर्णन करते हुए उन्होंने जिस प्रकार से, पंचम व धैवत स्वरों का वर्णन प्रस्तुत किया है, उससे स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षाकार ने षड्ज व मध्यम ग्रामों के मूल भेद को विस्तृत रुप में वर्णित न कर, सांकेतिक रुप से वर्णित कर दिया है। इस तथ्य से बोध होता है कि शिक्षाकार को षड्ज व मध्यम ग्रामों का पूर्ण बोध था तथा ये दोनों ग्राम तत्कालीन संगीत में प्रचलित थे। यद्यपि नारदीय शिक्षा में किसी ग्राम की श्रुति–स्वर व्यवस्था का उल्लेख नहीं किया गया है तथापि ऐसा आभास होता है जिस रुप में उनके परवर्ती विद्वानों ने, इन्हें वर्णित किया है।

शिक्षाकारोक्त मूर्च्छना के उल्लेखों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि शिक्षाकार ने षड्ज व मध्यम ग्राम की सभी मूर्च्छनाओं का उल्लेख नहीं किया है। उन्होंने षड्ज ग्रामिक पांच मूर्च्छनाओं व मध्यम ग्रामिक दो मूर्च्छनाओं का ही वर्णन किया है। अतः यहाँ आभास होता है कि षड्ज व मध्यम ग्राम की मूर्च्छनाओं की प्राथमिक व आरम्भिक जानकारी हेतु, परवर्ती ग्रन्थकारों के लिए, नारदीय शिक्षा, आधार ग्रन्थ रहा होगा। शिक्षाकारोक्त ऋषि ने मूर्च्छनाओं की संख्या बढ़ा कर ही, परवर्ती काल में संगीत कार्य किया गया हो तो आश्चर्य नहीं। इसके अतिरिक्त मकरंदकार नारद, नान्यभूपाल व पं0 शारंगदेव जैसे परवर्ती विद्वानों के लिए गान्धार ग्रामिक मूर्च्छनाओं की जानकारी प्राप्त करने का स्रोत भी, नारदीय शिक्षा ग्रन्थ ही रहा है। मात्र 'तान' के विषय में शिक्षाकार व परवर्ती ग्रन्थकारों के मतों में भेद दिखता है परंतु स्वयं शिक्षाकार ने भी 'तान' विषय पर अधिक चर्चा नहीं की है।

ग्राम–राग – शिक्षाकार ने सात ग्राम–रागों, पंचम, मध्यम ग्राम, षड्ज ग्राम, साधारित, कैशिक मध्यम तथा कैशिक का उल्लेख किया है तथा संक्षिप्त रुप में उनके स्वरुप का भी वर्णन किया है। परंतु शिक्षाकार द्वारा वर्णित सप्त ग्राम–रागों के स्वरुप वर्णनों से यह सप्त ग्राम–राग स्पष्ट नहीं हो पाते। शिक्षाकार के परवर्ती ग्रन्थकारों ने भी इन्हीं नामों से विभिन्न रागों का उल्लेख किया है किन्तु शिक्षाकार व परवर्ती ग्रन्थकारों के मतों में अन्तर दृष्टिगोचर होता है, जिसके विभिन्न कारण हो सकते हैं। सम्भवतः शिक्षाकारोक्त ग्राम–राग व परवर्ती आचार्यों द्वारा वर्णित शुद्ध राग या राग की पृथक्–पृथक् गायन शैलियाँ रहीं हों तथा उनमें केवल नाम की ही समानता रही हो अथवा शिक्षाकारोक्त 'ग्राम–राग' ही अपनी प्राथमिक अवस्थाओं में परिष्कृत व परिमार्जित होकर परवर्ती काल में 'शुद्ध राग' के रुप में तथा बाद में 'राग' के रुप में स्थापित हो गए हों। परंतु स्पष्ट साक्ष्य प्राप्त न होने के कारण ग्राम–रागों के स्वरुप के विषय में दृढ़ता से निर्णय नहीं लिए जा सकते है। किन्तु इस अध्याय में 'ग्राम–राग' विषयक अध्ययन करने के कुछ अन्य तथ्य स्पष्ट हो जाते हैं। शिक्षाकार ने जिन सात ग्राम–रागों का वर्णन किया है उनका ज्ञान परवर्ती ग्रन्थकारों को भी रहा है। 'ग्राम–राग' परवर्ती काल में प्रचलित हुई विधाओं, जाति व राग से पृथक् गायन विधा थी तथा वे जाति व राग से भी प्राचीन हैं। इस आधार पर व याष्टिक आदि पूर्वाचार्यों के कथनों के आधार पर भी आभास प्राप्त होता है कि जहाँ स्वर से ग्राम व मूर्च्छना की उत्पत्ति हुई वहीं सम्भवतः ग्राम से ही आदिम गायन शैली 'ग्राम–राग' का भी उद्भव हुआ। इस अध्याय में ग्राम–राग के अध्ययन से यह भी संकेत प्राप्त होते हैं कि जिस प्रकार मूर्च्छना से जाति व जाति से रागों की उत्पत्ति मानी गई है उसी प्रकार कुछ रागों की उत्पत्ति में ग्राम–राग भी सहायक रहे हैं।

शिक्षाकार ने नारदीय शिक्षा ग्रन्थ में संगीत से सम्बद्ध जिन तत्वों का समावेश किया है, प्रायः उनका प्रयोग गायन के संदर्भ में ही होता है। इस ग्रन्थ में वादन तथा नर्तन संगीत से सम्बद्ध विषयों के उल्लेख प्राप्त नहीं होते। अतः शिक्षाकार ने गायन अथवा गान को ही आधार मानकर गान के विविध गुणों तथा गीत के विभिन्न दोषों की चर्चा भी, अपने ग्रन्थ में की है।

शिक्षाकार ने नारदीय शिक्षा में गान के दस गुणों पर विस्तृत चर्चा करने के पश्चात् गीति के दोषों का भी उल्लेख किया है। शिक्षाकार ने गीति के दोषों का विस्तृत वर्णन नहीं किया है अपितु उनके नामोल्लेख मात्र कर दिए हैं। नारदीय शिक्षा में गीति के चौदह दोषों का नामोल्लेख प्राप्त होता है।

नारदीय शिक्षा के प्रथम प्रपाठक की आठ कण्डिकाओं में कुल 124 श्लोक संग्रहीत हैं तथा द्वितीय प्रपाठक की आठ कण्डिकाओं में कुल 113 श्लोक संग्रहीत हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण नारदीय शिक्षा ग्रन्थ में कुल 238 श्लोक संकलित हैं। नारदीय शिक्षा में संकलित सभी श्लोक प्रायः उसी रुप में है जैसे बृहन्नारदीय पुराण या महानारदीय पुराण में भी वर्णित किए गए हैं। कुछ आधुनिक विद्वानों का मत है कि नारदीय शिक्षा ग्रन्थ, नारदीय पुराण में से ही उदधृत किया गया है परंतु इस विषय पर साक्ष्य उपलब्ध नहीं होते हैं।

2.7 संगीत मकरंद ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन

आठवीं शताब्दी में नारद का एक और ग्रंथ 'संगीत मकरंद' प्रकाश में आया। इस ग्रंथ में प्रथम बार पुरुष राग, स्त्री राग और नपुंसक रागों का वर्गीकरण मिलता है। परन्तु यह ध्यान देने की बात है कि उन्होंने 'रागिनी' शब्द का प्रयोग नहीं किया है। इसमें 20 पुरुष राग, 24 स्त्री राग और 13 नपुंसक राग गिनाए हैं। रागों के इस वर्गीकरण का आधार उनका रस है। उनका कहना है कि रौद्र, अद्भुत तथा वीर रस के लिए पुरुष राग, श्रृंगार तथा करुण के लिए स्त्री राग और भयानक, हास्य तथा शांत रस की उत्पत्ति के लिए नपुंसक रागों को प्रयोग में लाना चाहिए। इस ग्रंथ में राग की जातियाँ

(संपूर्ण, षाडव व औडव) तथा गान–समय भी बताया गया है। राग–रागिनी वर्गीकरण की प्रक्रिया पाँच–दस वर्ष तक सीमित नहीं है। लगभग 8वीं–9वीं शताब्दी में लिखे गए 'संगीत–मकरन्द' से लेकर 19वीं शताब्दी के अन्त तक के एक सहस्र वर्षों से भी अधिक इसका क्रम चलता रहा। इसके रहते मेल राग वर्गीकरण और रागांग वर्गीकरण भी अस्तित्व में आ चुके थे। लेकिन यह प्रक्रिया फिर भी अपना सम्मान बनाए रही, यह कम महत्व की बात नहीं है।

संगीत मकरन्द में छह राग, छत्तीस रागिनियाँ का वर्णन है। इसी में एक अन्य मत के अनुसार आठ पुरुष राग, तीन–तीन स्त्रियाँ राग बताए गए हैं। ग्रंथ में स्वर, मूर्च्छना, राग, ताल आदि विषयों को लिया गया है। स्वर ही संगीत का पर्याय है, इसलिए 'स्वर' के साथ जिन पशु–पक्षियों के सम्बन्धों की चर्चा प्राचीन और अर्वाचीन विद्वानों ने की है वह भी एक प्रकार से उपर्युक्त कारणों से जुड़ी हुई है। षडजादि 'स्वरों' से जिन पक्षियों और पशुओं की ध्वनियों का सम्बन्ध जोड़ा गया है उसे इसी कारण न तो कोरी कल्पना कहा जा सकता है और न ही इन विचारों को किसी अन्य दृष्टि से निराधार कहा जा सकता है।

संगीत मकरंद में नारद ने षडजादि स्वरों के साथ पक्षियों या पशुओं की ध्वनि का सम्बन्ध बताया है उन सब में समानता अधिक है और भिन्नता कम। षडज, पंचम और निषाद इन तीन स्वरों के साथ मोर, कोयल और हाथी की ध्वनियों के सम्बन्ध में तो इस वर्ग के सभी विद्वान एकमत हैं। शेष स्वरों में भी कोई बहुत बड़ा मतभेद नहीं है। संगीत मकरन्द में मयूर, चातक, अजा, क्रौंच, पिक, अश्व, गज की ध्वनियों का वर्णन स्वरों के सम्बन्ध में किया गया है।

संगीत मकरंद में ग्राम–सम्बन्धी उल्लेख भी हैः–

ग्रामः स्वरसमूहः स्यान्मूर्च्छना तु स्वराश्रया।
षडजमध्यमगान्धारग्राम त्रयमुदाहृतम्।।

ग्राम–सम्बन्धी धारणा में दो बातों का मुख्य रुप से उल्लेख हुआ है। शारंगदेव के पूर्ववर्ती आचार्यों ने ग्राम को केवल मात्र विशिष्ट स्वर समूह कहा है, लेकिन उन्होंने उसे (ग्राम को) मूर्च्छनाओं को समाश्रय भी कहा है। संगीत–मकरंद की ग्राम सम्बन्धी परिभाषा भी लगभग ऐसी ही है। यह ग्रन्थ रत्नाकर का पूर्ववर्ती माना जाता है। इसके अनुसार यह कहा जा सकता है कि रत्नाकरकार को संगीतकार–मकरंद की तथाकथित धारणा ने प्रभावित किया होगा। लेकिन रत्नाकरकार जैसे स्वतन्त्र चिन्तक के विषय में अत्यन्त निर्णयात्मक ढंग से यह नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने अपनी ग्राम–सम्बन्धी धारणा संगीत–मकरन्द से प्रभावित होकर निर्धारित की होगी। मूर्च्छना के मूलभूत स्वरुप पर कोई विशेष मतभेद नहीं है। प्रत्येक मूर्च्छना सात स्वर की होनी चाहिए, उसमें स्वर क्रमानुसार होने चाहिए, दोनों ग्रामों का प्रत्येक स्वर एक–एक मूर्च्छना का मूल स्वर हो सकता है। सभी मूर्च्छनाएं जातियों व रागों की जननी है।

नारद, भरत और अन्य सभी परवर्ती विद्वानों ने जिन तान प्रकारों का उल्लेख किया है उनका सम्बन्ध औड़व–षाड़व रुपों से है। इसलिए उन्हें औड़विता तथा षाड़विता तानें भी कहते हैं। इसी षाड़व–औड़वकरण के जो नियम बनाए गए उनके अनुसार दोनों ग्रामों की तानों की संख्या भी निर्धारित की गई। ये सब यदि मूर्च्छना के मूल प्रकार मान लें तो सुचारु सिद्धांत प्रक्रिया में मतभेद की गुंजाइश हो जाती है। हमारी मान्यता है कि मूर्च्छनाएं गेय नहीं हैं। यदि तान प्रकारों को मूल मूर्च्छना प्रकार मान लिया जाता है तो यह धारणा जो कि निर्भ्रान्त है, आपत्तिजनक हो जाती है। सभी ने मूर्च्छनाओं के बाद तानों का उल्लेख किया है। इसका कारण तो सिद्धांतों का क्रमबद्ध विवेचन है। इसको आधार मानकर इन तान प्रकारों को मूर्च्छनाएं नहीं कहा जा सकता।

श्रुतियों के नाम प्रचलित परंपरा से भिन्न हैं। भरत मुनि ने जहाँ तैंतीस अलंकारों का वर्णन किया है, वहाँ इस ग्रंथ में केवल उन्नीस अलंकारों का निरुपण है। नखज, वायुज, चर्मज, लोहज और

शरीरज नाम से नाद के पाँच भेदों का उल्लेख है तथा वीणा के अठारह भेदों का वर्णन है। कहा जाता है कि इसी के आधार पर आगामी ग्रंथकारों ने राग–रागिनी–वर्गीकरण किए हैं।

संगीत मकरन्द में ताल के सम्बन्ध में जो कुछ उल्लेख मिलते हैं, वे अर्थ की दृष्टि से लगभग एक जैसे हैं। ताल के भाव को स्पष्ट करने के लिए दोनों में कहने की शैली मात्र को भिन्न कहा जा सकता है :–

ताल शब्दस्य निश्पत्ति प्रतिश्ठार्थेन धातुना।
गीतं वाद्यं च नृत्यं च भातिताले प्रतिष्ठितम्।।

ताल की इस धारणा में 'धातु' शब्द का प्रयोग आया है जो कला, क्रिया आदि अन्य शब्दों की ओर संकेत कर सकता है। '

संगीत मकरन्द के अनुसार संगीत के त्रितत्वयुक्त स्वरुप में ताल का मूर्धन्य स्थान है, इसमें कोई सन्देह नहीं। इसकी पूर्णता के ज्ञान हेतु उन पारिभाषिक शब्दों का उल्लेख पर्याप्त सहायक हो सकता है जो इस तत्व के अनिवार्य अंग हैं। इनके सम्बन्ध में सूत्रमूलक श्लोक इस प्रकार है–

कालमार्ग क्रियांगनि ग्रहजातिकलालयाः।
यतिप्रस्तारक चैव तालप्राणा दश स्मृताः।।

उपरोक्त श्लोक के अनुसार पहला स्थान काल को दिया गया है। ताल लय की एक ऐसी सुनिर्धारित इकाई है जो स्वर और पद को सक्रियता ही नहीं, अपितु सौष्ठव भी प्रदान करती है। ये दोनों काल से जुड़े हुए हैं। दूसरे शब्दों में अखण्ड काल प्रवाह का सुन्दर विभाजित रुप ही ताल या लय है। यह सर्वविदित है कि काल की जो विभाजन क्रियाएं मनुष्य ने निर्धारित की हैं, वह उसने अपनी सुविधा को ध्यान में रखकर, काल की अखण्डता को सखण्डता में रखकर निर्धारित की है। ताल ही नहीं, जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी काल की सबसे छोटी मापन क्रिया से लेकर विशाल मापन क्रिया तक के अनेक मानक हैं। जीवन के व्यावहारिक रुप में निमेष से लेकर सहस्रशाब्दियों या युगों तक इसकी विशालतम सीमाएं हैं।

2.8 संगीत चिन्तामणि ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन

संगीत चिन्तामणि ग्रन्थ सन् 1966 में प्रकाशित हुआ, जिसकी रचना प्रकाण्ड संगीत–शास्त्र ज्ञाता आचार्य बृहस्पति ने की। 1976 में इसका द्वितीय संस्करण एवं सन् 1987 में इस ग्रंथ का दूसरा भाग प्रकाशित हुआ। ग्राम एवं सप्तक के विषय में संगीत चिन्तामणि के प्रथम भाग में वर्णित है कि सप्तक वस्तुतः सात स्वरों का वह मूल समूह रहा होगा जिसने ग्राम के शास्त्र सम्मत को जन्म दिया। आज जिस प्रकार हम किसी भी स्वर सप्तक को, अंग्रेजी के स्केल का अनुवाद करते हुए 'ग्राम' कह देते हैं, उस अर्थ में प्राचीनों ने ग्राम शब्द का प्रयोग नहीं किया है। यों तो प्रत्येक मूर्च्छना एक स्वतन्त्र सप्तक है किन्तु उसे शास्त्रीय दृष्टि से ग्राम नहीं कहा सकती। ग्राम तो वही स्वर समूह है जिसे अन्य मूर्च्छना प्रयोग के लिये आधारभूत मान लिया गया हो।

सप्तक स्केल का अनुवाद हो सकता है, ग्राम का पर्याय नहीं। ग्राम की कुछ मूल विशेषताएं होती हैं जिनके फलस्वरुप एक विशिष्ट सात स्वरों का समूह बनता है। संगीत चिन्तामणि के अनुसार – सप्तक के शेष चार स्वर तो ग्राम सम्बन्धी प्रमुख विशेषताओं के कारण स्वतंत्र ग्राम नहीं बन सकते। व्यावहारिक रुप से यदि ग्राम व्यवस्था को देखा जाए तो ग्राम में एक ग्राम के सभी निवासी मुखिया नहीं होते, मुखिया तो एक ही होता है। यह बात दूसरी है कि उन सबको उनके कार्यक्षेत्र के अनुसार वांछित स्थान दिया जाता है। केवल सात स्वर बना लेना भी तो ग्राम नहीं है। ग्राम निर्माण के लिए यदि यही एकमात्र नियम है तो फिर ग्राम के पश्चात् मूर्च्छनाओं और जातियों के निर्माण की आवश्यकता ही क्या है। शेष चारों स्वर ग्राम क्यों नहीं रहे, इसका एक स्पष्ट कारण निम्नोधृत ग्राम

सम्बन्धी वे विशेषताएं हैं जिन्हें आचार्य बृहस्पति ने निर्धारित किया है और जो कदाचित् अभिनव गुप्त द्वारा भी विवेचित हैं। इस समस्त चर्चा का सारांश यह है कि:

1. ग्रामणी स्वर परिमाण में किसी भी अन्य स्वर की अपेक्षा न्यून नहीं होना चाहिए। अर्थात् ग्रामणी स्वर का चतुःश्रतिक होना अनिवार्य है।
2. एक सप्तक में ग्रामणी स्वर से नौ और तेरह श्रुतियों के अन्तर पर दो स्वर अवश्य होने चाहिए।
3. ग्रामणी स्वर से अगला स्वर त्रिश्रुतिक अवश्य होना चाहिए।

मूर्च्छनाओं से सम्बन्धित अभिनव गुप्त के दृष्टिकोण को समझाते हुए संगीत चिन्तामणि में वर्णित है कि हर उदार और मूलभूत विषय अनादि होता है। उसे यदि स्वयंभू कह दिया जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। मूर्च्छना कुछ–कुछ ऐसा ही आधारभूत सिद्धांत है। इसकी जड़ें वेदकाल में यदि मिल जाती हैं तो आश्चर्य की कोई बात नहीं। आचार्य अभिनव गुप्त ने मूर्च्छना के सम्बन्ध में स्थान–स्थान पर काफी विस्तारपूर्वक विचार व्यक्त किये हैं। वह एक भाष्यकार हैं अतः किसी शब्द का सूत्रमूलक स्वरुप उन्हें अभीष्ट नहीं है। लेकिन फिर भी वह भरत–मतंग आदि परम्परागत मूर्च्छना सिद्धांतों की व्याख्या इस रुप में करते हैं जिससे उनकी तद्विषयक निजी धारणा भी सम्मिलित हो जाती है। इस बात को ध्यान में रखते हुए अभिनव गुप्त का मूर्च्छना सम्बन्धी दृष्टिकोण भरत और मतंग से भिन्न नहीं है। उन्हीं के शब्दों से यह बात उदधृत की जा सकती है कि मूर्च्छना का सम्बन्ध ऋक, गाथा आदि से जुड़ा हुआ है :–

मूर्च्छनातानानां ऋग्गाथा सामभ्यंआनीय यदि प्रकर्षेण।
योजनं स्थानानां विशेषरक्तिदायिनां प्राप्त्यर्थम।

अर्थात् 'ऋक, गाथा और साम से ग्रहण करके मूर्च्छना और तानों का प्रकर्षपूर्वक योजन विशेष रक्तिदायक स्थानों की प्राप्ति के लिए है।

राग वर्गीकरण के अन्तर्गत संगीत चिन्तामणि भाग एक में उल्लेख है कि थाट, रागों में प्रयुक्त होने वाले स्वरों को याद रखने हेतु एक तात्कालिक प्रबन्ध मात्र है। ''मेल–पद्धति, ठाठ–पद्धति 'राग' के शरीर पर विचार करती है। वह हमें यह नहीं बताती कि किस राग में किन–किन स्वरों का किस–किस मात्रा या किस–किस परिमाण में प्रयोग किस–किस भाव की अभिव्यक्ति में सहायक होकर कौन से प्रधानभाव का परिपोश करता है। इसलिए आज का गायक 'वैचित्रय' के पीछे पड़ा हुआ है, तैयारी उसका लक्ष्य है और वह अपनी तैयारी से श्रोताओं को आतंकित या चकित कर देना चाहता है''।

संगीत चिन्तामणि ग्रंथ में निम्न उल्लेख भी प्राप्त होता है:–

- शुद्ध स्वरावलि, प्राकृतिक स्वरावलि तथा आधार स्वरावलि।
- स्वरों की शुद्धता और सार्थकता, षड्जग्रामीय शुद्ध सप्तक और काफी ठाठ, भातखण्डे जी के मूल स्वर, .महाभारत के सांगीतिक स्वर।
- वाद्यों की उत्पत्ति, वाद्यों के प्रकार, गीत अनुकरण के प्रकार, वृत्ति, वीणा के प्रकार, वंश का महत्व, अवनद्य वाद्यों के प्रकार, घनवाद्यों के प्रकार।
- ख्याल और उसका विकास।
- निबद्धगान, तानसेन के ध्रुवपद, सदारंग की रचनाएं, नई बंदिशें, स्व0 भातखण्डे जी के विचार, भातखण्डे जी की दृष्टि में गीत रचना के सिद्धांत।
- संगीत में धमार, वैष्णव संतों के धमार पद, सदारंग परम्परा के पखावजी, रामपुर–दरबार के तन्त्री–वादक, धमार ताल की मात्राओं का विभाजन, मुगल दरबार तथा अन्तःपुर की होली, सदारंग की रचनाएँ।

- प्राचीन वाङ्मय में कथक शब्द, नृत्य और नाट्य, कथक शब्द का अर्थ तथा पर्याय, तेरहवीं शती ई0 में कथक रीति का उल्लेख, चौदहवीं शती ई0 के उत्तरार्द्ध में सम्प्रदायों का पुनरुद्धार।
- भारतीयों का उच्चारण–नैपुण्य, भारत ज्ञान–कोष, ब्राहमणों की विद्वता और श्रेष्ठता, भारतीय संगीत की श्रेष्ठता।
- अरब के संगीत की अपेक्षा भारतीय संगीत की श्रेष्ठता, विदेशियों के लिए भारतीय संगीत की अगम्यता, भारतीय संगीत की श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए अमीर खुसरो के प्रयत्न।
- गीत का लक्षण, रसास्वाद, नाट्य में रस–परिपाक की प्रक्रिया।
- वेद और गान ,'ऋग्वेद' प्राचीनतम ग्रन्थ, गेय रुप सामवेद, सामगान में स्वरों का प्रयोग।
- दरबार और संगीत, हज़रत अमीर खुसरो।
- तानसेन विषयक ऐतिहासिक तथ्य, तानसेन एवं हरिदास।
- उत्तम गान, गायक की प्रमुखता, गायन में राग, ताल तथा बंदिश का महत्व, वाग्गेयकार, गायन में भाषा का महत्व।

2.9 संगीतांजलि ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन

संगीतांजलि ग्रंथ की रचना सन् 1938 में संगीत मार्तण्ड पं0 ओमकार नाथ ठाकुर ने की। इसके पश्चात् निरन्तर इसके सात भाग प्रकाशित हो चुके हैं। क्रियात्मक दृष्टि से संगीत के अन्तर्गत सभी स्तर के शिक्षार्थियों के लिए यह ग्रंथ अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि विस्तृत रुप से संगीतशास्त्र के साथ इस ग्रंथ के छः भागों में लगभग समस्त प्रचलित एवं मूल रागों का सम्पूर्ण वर्णन मिलता है। संगीतांजलि ग्रंथ सात भागों में विभाजित है। इन सात भागों में मुख्य रुप से रागों का समय निर्धारण, निबद्ध–अनिबद्ध गान, रागांग वर्गीकरण, संगीत शास्त्र ग्रंथों का परिचय, साम–गान का उल्लेख, ग्राम मूर्च्छना, चतुर्सारणा एवं सांगीतिक ध्वनि का वैज्ञानिक अध्ययन आदि विभिन्न तत्वों का उल्लेख प्राप्त होता है। इन सात भागों में विभिन्न रागों का सम्पूर्ण विवरण एवं उनमें प्रयुक्त सूक्ष्म स्वर तथा सौन्दर्यात्मक तत्वों का उल्लेख प्राप्त होता है। इनमें कुछ राग हैं–भूपाली, हंस ध्वनि, दुर्गा, सारंग, देश, खमाज, काफ़ी, शंकरा, विहाग, हमीर, बागेश्वरी, भैरवी, छायानट, मल्हार, विभास, दरबारी, मालगुंजी आदि। संगीतांजलि ग्रंथ के सात भागों में निम्न उल्लेख प्राप्त होता है।

संगीतांजलि ग्रंथमाला के प्रथम भाग में ''संगीत'' की परिभाषा, 'संगीत'' के मुख्य तत्व या उपकरण, स्वर सम्बन्धी विषय, नाद–आहत और अनाहत, नाद के तीन गुण सप्तक और अष्टक, शुद्ध विकृत स्वर, स्वर संवाद, वर्ण, अलंकार या पलटा, राग के मुख्य तत्व, राग–जाति, लय और उसके तीन भेद आदि की विस्तार से व्याख्या की गई है।

प्रथम भाग में जो नौ राग दिये हैं, उनके क्रम में भी एक विशेषता है। प्रथम भाग में सप्त स्वरों के परिचय के बाद उन स्वरों में से म–नि और म–ध, ग–नि और ग–ध, रे–ध और रे–प, इन स्वर जोड़ियों को निकाल कर भूप, हंसध्वनि, दुर्गा, सारंग, तिलंग और भिन्नषड्ज इन रागों की उत्पत्ति की गई थी और इन्हीं रागों के स्वरों में रे–ध और ग–ध की स्वर जोड़ियों के प्रयोग से खमाज और देश कैसे बनता है, इसका बोध दिया गया था। सारंग, तिलंग, देश और खमाज में निशाद कोमल का परिचय तो विद्यार्थी पा ही चुके थे, किन्तु गान्धार कोमल का नूतन परिचय कराने के लिये उन्हें काफी राग सिखाया गया था। इस भाग में उसी शैली और उसी क्रम का अनुगमन किया गया है।

इस भाग में दिए हुए रागों के बँधे हुए आलाप–तानों के अभ्यास से एक विशेष घराने की परिपाटी का अल्प–परिचय होगा, जिससे सुन्दरता और मधुरता के साथ नये–नये विधान कैसे किए जाएँ और सम पर कैसे आया जाए, उसका ठीक–ठीक बोध हो सकेगा।

इस भाग में कुछ ध्रुवपद और धमार भी दिये हुए हैं। ख्याल–गायन के पूर्व ध्रुपद और धमार का परिचय पा लेना, उसकी लय की बांट को समझ लेना, द्विगुन, तिगुन, चौगुन और आड़ को आत्मसात् कर लेना और स्वर को स्थैर्य प्राप्त करना अत्यावश्यक है।

संगीतांजलि ग्रंथमाला के प्रथम भाग में रागों का परिचय देते हुए प्रायः पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग नहीं किया गया है। दूसरे भाग में रागों के परिचय में ग्रह, अंश, न्यास ऐसे कई पारिभाषिक शब्द आए हैं। यहाँ शुरु में इस भाग के पहल संस्करण से 'कुछ शास्त्रीय शब्दों की व्याख्या' इस शीर्षक में जो कुछ कहा गया है, उसे और राग–परिचय की भाषा को यदि एक साथ रखकर देखें तो पाठकों को सहज ही यह ध्यान में आएगा कि इस ग्रंथमाला के लेखक ने राग–परिचय में प्राचीन पारिभाषिक शब्दों का पुनर्रुद्धार करना चाहा है।

राग–संबंधी पारिभाषिक शब्दों का इतिहास स्वर–व्यवस्था के इतिहास के साथ जुड़ा है। इसलिए ऊपर लिखे शब्दों के इतिहास को अलग करके नहीं देखा जा सकता है। प्राचीन स्वर–व्यवस्था की चर्चा इस ग्रंथमाला के चौथे भाग से ही थोड़ी–थोड़ी शुरु हुई है, इसलिए इस भाग में राग–संबंधी शब्दों की पूरी व्याख्या देना मूल लेखक ने जरुरी नहीं समझा होगा। तीसरे भाग में 'कुछ पारिभाषिक शब्दों की व्याख्या' इस शीर्षक से पृष्ठ 12–15 पर 'वादी–संवादी' और 'ग्रह–अंश' आदि की कुछ विस्तार से व्याख्या की गई है।

'संगीतांजलि' के क्रमिक पाठ्य–क्रम के तीसरे भाग में उस ख्याल–गायकी की शिक्षा का आरंभ करना उचित माना है। ख्याल गायकी के भिन्न–भिन्न घरानों की परंपरा का उल्लेख यहाँ आवश्यक नहीं समझा है, परन्तु हमारी अपनी ख्याल गायकी की परंपरा के अंगों को यहाँ समझाना विशेष रुप से समुचित माना है।

संगीतांजलि के प्रथम दो भागों में चौताल, झपताल, सूलताल, धमार, तेवरा आदि ध्रुवपद अंग के तालों में गीत, पूर्व–उल्लिखित लय की बाँट सहित विद्यार्थियों को अवगत कराये गए हैं। इस भाग में नौ रागों के ख्याल, उनके तालबद्ध आलाप, बोलतानें और तानें दी गई हैं।

अभ्यास और विकास के लिये मुक्त आलाप और मुक्त तानें प्रथम दो भागों में भी दिए गए हैं और इस भाग में विशेष विस्तार से दिये गए हैं। मुक्त आलाप और मुक्त तानों का अभ्यास करके विद्यार्थी अपनी बुद्धि से उन रागों के पदों में स्वयं उनका उपयोग कर सकें, और स्वनिर्मित आलाप–तान से गीत को अलंकृत कर सकें, इसीलिये उनका समावेश किया गया है। तालबद्ध आलाप, बोलतान और तानें इसलिये दी गई हैं कि इससे विद्यार्थी किस ढंग से आलाप का क्रमिक विस्तार करें, बोलतान को निबद्ध करें, तान का प्रस्तार करें और तिहाइयों से गीत को सजा कर रंजकता बढ़ाएं, इन सब बातों में उनका मार्गदर्शन हो सके।

पाँचवें भाग में दो खण्ड हैं– प्रथम खण्ड में इस पाठ्यक्रम के अन्तर्गत शास्त्रीय विभाग है और द्वितीय खण्ड में प्रयोगगत क्रिया से संबंधित विषय रखे गए हैं। परिशिष्ट में इस पाठ्यक्रम के उपांग–स्वरुप चार राग दिए गए हैं।

शास्त्रीय खण्ड के आरम्भ में भारतीय संगीत के शास्त्र–ग्रन्थों का अल्प परिचय दिया है, गान्धर्व वेद, भरत नाट्यशास्त्र, बृहद्देशी, 'संगीत रत्नाकर' इत्यादि प्रमुख ग्रन्थों की विषय–सूची इस प्रकरण में दी गई है। इसका उद्देश्य विद्यार्थियों की रुचि बढ़ाना, प्राचीन साहित्य के अध्ययन के प्रति उनकी जिज्ञासा जाग्रत करना और ऐसे अध्ययन की अनिवार्य आवश्यकता सिद्ध करना ही है।

शास्त्र–ग्रन्थ परिचय के बाद प्रस्तुत पाठ्यक्रम के अन्तर्गत पूरे स्वर–प्रकरण के विषयों का समावेश किया गया है। भरत का विषय यहाँ नहीं लिया गया है। राग–शास्त्र के विषयों के साथ

उसका उल्लेख आगामी षष्ठ भाग में किया है। क्योंकि यह विषय राग से ही संबंधित है। स्वर, श्रुति, ग्राम, मूर्च्छना इत्यादि विषयों का परस्पर अविच्छेद संबंध, एक को समझे बिना दूसरे को समझना असंभव–सा है।

इस ग्रन्थ में अनिवार्य रुप से 'संगीत रत्नाकर' जैसे ग्रन्थ के प्रणेता निःशंक शारंगदेव के दिए हुए श्रुति–स्वर सम्बन्धी विधानों से सम्मत न हो सकने के कारण जहाँ–जहाँ आवश्यक प्रतीत हुआ, उतने अंश पर निर्भीकता से विचार प्रकट किए हैं, विशेष रुप से विकृत स्वर–प्रकरण की ओर। 'प्रणव–भारती' के तृतीय अध्याय में रत्नाकरोक्त विकृत स्वरों का जो विवरण दिया गया है, उससे भिन्न विचारधारा का यहाँ उल्लेख करना पड़ा है। इतने विशाल ग्रन्थ के रचयिता की ओर से श्रुति, स्वर, सारणा इत्यादि के सम्बन्ध में कोई बड़ी भूल हो सकती है, ऐसे विचार प्रकट करना किसी की राय में दुःसाहस भी माना जा सकता है। संभव है कि इसी आतंक के कारण लोग स्पष्टीकरण से विरत रहे हों, किन्तु मध्ययुग से आज तक संगीत के शास्त्र–ग्रन्थों में जो भ्रम–जाल दिखाई देता है, जिससे हम भी पूर्ण मुक्त नहीं रह पाए थे, उसका क्रियादंश में निराकरण करने का विषय ग्रंथमाला के इस भाग में प्रयत्न किया गया है। सतत परीशीलन से जो आलोक प्राप्त हुआ उसे अपने तक सीमित न रखने की कर्तव्य–बुद्धि से प्रेरित होकर ही यथा स्थान 'रत्नाकर' सम्बन्धी उल्लेख इस भाग में दिए गए हैं।

2.10 संगीत पारिजात ग्रन्थ का सामान्य अध्ययन

इस ग्रन्थ के लेखक पण्डित अहोबल हैं। लेखक ने अपने तथा रचना–काल के विषय में कुछ नहीं कहा है पर वर्णित सामग्री को देखते हुए काल व स्थान का किसी हद तक निर्धारण किया जा सकता है।

काल – संगीत–परिजात के उद्धरण पं0 श्रीनिवास और भावभट्ट ने दिए हैं। भावभट्ट ने श्रीनिवास को भी उद्धृत किया है। भावभट्ट का रचना–काल सत्रहवीं शताब्दी का अन्तिम दशक है, अतः कहा जा सकता है कि पं0 अहोबल ने संगीत–पारिजात की रचना सत्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में की होगी। अधिकांश संगीत के ग्रन्थों में संगीत–पारिजात का समय सन् 1650 ई0 दिया गया है। हमारे विचार से इसका रचनाकाल एक–दो दशक और पहले का होना चाहिए ।

स्थान – यद्यपि संगीत–पारिजात उत्तर भारत का ग्रन्थ है पर विषय वस्तु को ध्यान से देखने पर ज्ञात होता है कि पं0 अहोबल उत्तर व दक्षिण दोनों पद्धतियों के जानकार थे या सम्भव है कि वे दक्षिण से आ कर उत्तर में बसे हों। संगीत–पारिजात में भी मुखारी मेल (हिन्दुस्तानी सा रे रे म प ध ध सां) दक्षिण वाले स्वरों में ही मिलता है। अहोबल ने और भी कुछ रागों में दक्षिण की भाँति कोमल–ऋषभ व शुद्ध–ऋषभ, एक के बाद एक का प्रयोग रागों के वर्णन में दिया है। अतः कहा जा सकता है कि अहोबल पर दक्षिणी–संगीत का प्रभाव था। वैसे सम्पूर्ण ग्रन्थ उत्तर भारत के संगीत का ही विवेचन करता है।

शुद्ध–सप्तक – संगीत–पारिजात का शुद्ध–सप्तक वर्तमान काफी के समान था। अर्थात वर्तमान उत्तरी–संगीत के अनुसार अहोबल के शुद्ध–सप्तक में गांधार व निषाद कोमल तथा शेष सभी स्वर शुद्ध लगते थे। इसकी पुष्टि के लिए दो तर्क दिए जा सकते हैं। प्रथम तो यह कि वह प्राचीन ग्रन्थकारों अपने शुद्ध स्वरों को षड्ज–ग्राम के स्वर कहते है जो चौथी, सातवीं, नौवीं, तेरहवीं, सत्रहवीं, बीसवी, और बाईसवीं श्रुतियों पर षड्ज, ऋषभ आदि सातों स्वरों को स्थापित करने का विधान है। षड्ज–ग्राम के स्वर आधुनिक काफ़ी के लगभग समान कहे जा सकते हैं। अन्तर केवल यह है कि षड्ज–ग्राम की अपेक्षा काफ़ी में ऋषभ और धैवत तीन के स्थान पर चार श्रुतियों के होते हैं। गांधार और निशाद भी अपने स्थान से एक–एक श्रुति ऊँचे होते है। दूसरे तर्क के अनुसार वीणा पर स्वरों की स्थापना से तो निश्चित रुप से वर्तमान काफ़ी के ही स्वर, अहोबल के शुद्ध स्वर सिद्ध होते हैं। अतः कहा जा सकता है कि संगीत–पारिजात का शुद्ध–सप्तक वर्तमान काफ़ी के समान था।

विकृत–स्वर – संगीत–पारिजात ने विकृत स्वरों की संख्या 22 मानी है जो सम्भवतः किसी भी ग्रन्थकार के विकृत स्वरों की संख्या से कहीं अधिक है। संगीत–रत्नाकर में पं0 शारंगदेव ने विकृत स्वर 12 माने हैं। यह संख्या भी पर्याप्त थी पर अहोबल ने तो विकृत स्वर 22 मान कर अपने विकृत स्वर सर्वाधिक सिद्ध कर दिए।

शुद्ध अवस्था से स्वरों को ऊँचा करके – षड्ज–पंचम के अतिरिक्त कोई भी शुद्ध–स्वर जिसे एक श्रुति ऊँचा होने पर तीव्र, दो श्रुति ऊँचा होने पर तीव्रतर, तीन श्रुति ऊँचा होने पर तीव्रतम और चार श्रुति ऊँचा होने पर अतितीव्रतम कहा जाएगा। ध्यान केवल यह रखना होगा कि जो स्वर चढ़ रहा है वह आगामी स्वर से आगे न निकल जाए।

शुद्ध अवस्था से स्वरों को नीचा करके – वर्तमान में ऋषभ, गांधार, धैवत, निषाद स्वर, शुद्ध अवस्था से नीचे होने पर कोमल होते हैं। अहोबल के यही चार स्वर शुद्ध अवस्था से एक श्रुति नीचे होने पर कोमल और यही चारों स्वर अपनी शुद्ध अवस्था से दो श्रुति नीचे होने पर पूर्व–विकृत कहलाते थे। जैसे सातवीं पर अहोबल का शुद्ध–ऋषभ, छठी पर कोमल–ऋषभ और पाँचवीं पर पूर्व–ऋषभ है। नौवीं श्रुति पर शुद्ध–गांधार, आठवीं पर कोमल–गांधार और सातवीं पर पूर्व–गांधार है। इसी प्रकार धैवत और निषाद भी एक–एक श्रुति घटने पर कोमल और दो–दो श्रुति घटने पर पूर्व–विकृत कहलाते थे। अतः चार कोमल और चार ही पूर्व कुल आठ विकृत–स्वर अपने शुद्ध अवस्था से नीचे होने पर बनते थे। इस प्रकार अहोबल ने 14 तीव्र और 8 कोमल मिलाकर 22 विकृत–स्वर कहे हैं और उन्होंने इनमें सात शुद्ध स्वरों को मिला कर कुल 29 स्वरों का उल्लेख संगीत–पारिजात में किया।

मूर्च्छना व मेल – मूर्च्छना तो तीनों ग्रामों की सात–सात कही हैं पर सम्पूर्ण के साथ–साथ मूर्च्छना के षाडव व औडव भेद भी कहे हैं। षड्ज–ग्राम की मूर्च्छनाओं की संख्या 18948 कही गई है।

मूर्च्छना व मेल में अन्तर यह है कि मेल, राग में लगने वाले स्वरों को बताता है तो मूर्च्छना, राग के चलन का भी बोध कराती है। मूर्च्छना में आरोह व अवरोह का होना आवश्यक है। किसी एक मेल में समान स्वरों वाली दो मूर्च्छनाओं के आरम्भिक–स्वर के अलग होने के कारण वे भिन्न–भिन्न मानी जाती हैं।

वीणा पर लम्बाई के आधार पर स्वरों की स्थापना – पं0 अहोबल ने वीणा के तार की लम्बाई पर स्वरों की स्थापना करके स्वरों को श्रव्य के साथ–साथ दृश्य भी बना दिया, जिससे स्वरों की स्थिति में कोई संशय नहीं रहा।

स्वरों की स्थापना के लिए अहोबल ने तार के दो या तीन भाग करके शुद्ध व विकृत सभी स्वरों को स्थापित किया है। उन्होंने पूरे खुले तार के बीच में तार–षड्ज, मध्य–षड्ज और तार–षड्ज के बीच में मध्यम, पूरे तार के तीन भाग करके मेरु की ओर से प्रथम भाग पर पंचम, मध्य–षड्ज और पंचम के तीन भाग करके मेरु की ओर से पहले भाग पर ऋषभ, मध्य–षड्ज और पंचम के बीच गांधार (वर्तमान कोमल–गांधार), पंचम और तार–षड्ज के बीच धैवत, पंचम और तार–षड्ज के तीन भाग करके पंचम की ओर से दूसरे भाग पर निषाद (वर्तमान कोमल–निषाद) की स्थापना की।

विकृत स्वरों के लिए उन्होंने षड्ज और धैवत के बीच तीव्र–गांधार, षड्ज और ऋषभ के तीन भाग करके मेरु की ओर से दूसरे भाग पर कोमल–ऋषभ, गांधार एवं तार–षड्ज के तीन भाग करके गांधार की ओर से पहले भाग पर तीव्र–मध्यम, पंचम और तार–षड्ज के तीन भाग के पंचम की ओर से पहले भाग पर कोमल–धैवत, धैवत और तार–षड्ज के तीन भाग करके धैवत की ओर से दूसरे भाग पर तीव्र–निषाद (वर्तमान शुद्ध–निषाद) की स्थापना की।

रागों का विवेचन – संगीत–पारिजात में 122 रागों का वर्णन दिया गया है। प्रत्येक राग के स्वर, आरोह–अवरोह, ग्रह, न्यास, मूर्च्छना के स्वर दिए गए हैं। मूर्च्छना का अर्थ, राग के स्वरकरण की प्रथम तान है। उदाहरणार्थ यहाँ राग धनाश्री का विवरण दिया जा रहा है :–

"आरोहे रि–ध–हीना स्यात् पूर्णाशुद्धस्वरैर्युता।
गांधारस्वरपूर्वा स्याद्धनाश्रीर्मध्यमान्तका इति धनाश्रीः।"

ग म प नि सां, रें सां नि ध प म, ग म प म ग रे सा,
ग म प नि प नि सां, रें सां नि सां नि ध प म इति स्वर करणम्।

इस विवरण को देखने से ज्ञात होता है कि वर्तमान धनाश्री से पर्याप्त मात्रा में अहोबल का धनाश्री मिलता है। क्योंकि अहोबल के शुद्ध गांधार–निशाद हमारे कोमल गांधार–निशाद ही हैं।

रागों का रसों से सम्बन्ध – रागों का रसों से सम्बन्ध तो सभी प्राचीन ग्रन्थकारों ने जोड़ा ही है पर अहोबल ने एक नवीन विधि से रागों को रसों से सम्बन्धित किया है।

श्रुतियों की दीप्ता, करुणा, मध्या, मृदु व आयता ये पाँच जातियाँ कही गई हैं। जो श्रुति जिस राग में अंश बनती है, उस श्रुति की जो जाति है वही राग का रस होता है।

22 श्रुतियों में तीव्रा, कुमुद्वती, मन्दा, छन्दोवती आदि श्रुतियों के नाम कहे गए हैं। इन श्रुतियों की पाँच जातियाँ दीप्ता, आयता, मध्या, करुणा व मृदु जातियाँ सभी प्राचीन ग्रन्थकार कहते चले आए हैं। पं0 अहोबल ने इन जातियों का सम्बन्ध रागों के रसों से जोड़ा है। दीप्ता जाति की श्रुतियाँ तीव्रा, रौद्री, वज्रिका और उग्रा हैं। आयता जाति की कुमुद्वती, क्रोधा, प्रसारिणी, सन्दीपनी व रोहिणी हैं। करुणा जाति की दयावती, आलापिनी व मदन्ती हैं। मृदु जाति की मन्द्रा, रक्तिका, प्रीति व क्षिति हैं। मध्या जाति की छन्दोवती, रंजनी, मार्जनी, रक्तिका, रम्या व क्षोभिणी हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए :–

(क) नारदीय शिक्षा में..... प्रपाठक हैं।
(ख) संगीत मकरंद में 6 राग एवं.....रागिनियाँ बताई गई हैं।
(ग) संगीत रत्नाकर में कुल.....अध्याय हैं।
(घ) चतुर्दण्डी प्रकाशिका ग्रंथ सन्.....ई0 में लिखा गया।
(ड.) संगीत परिजात का शुद्ध सप्तक आधुनिक.....के समान था।
(च) संगीतांजलि ग्रंथ कुल.....भागों में विभाजित है।

2. सत्य/असत्य बताइए :–

(क) नारदीय शिक्षा ग्रंथ में कुल 208 श्लोक संकलित हैं।
(ख) नारद ने संगीत मकरंद ग्रंथ दसवीं शताब्दी में लिखा था।
(ग) संगीत रत्नाकर में 14 विकृत स्वरों का वर्णन किया गया है।
(घ) चतुर्दण्डी ग्रंथ में तीन प्रकार की वीणा का उल्लेख प्राप्त होता है।
(ड.) संगीत पारिजात में कुल 122 रागों का वर्णन मिलता है।
(च) संगीतांजलि ग्रंथ के तीसरे भाग में रागों का समय निर्धारण किया गया है।

3. अति लघु उत्तरीय प्रश्न :–

(क) नारदीय शिक्षा में कितने ग्राम रागों का उल्लेख प्राप्त होता है ?
(ख) संगीत मकरंद में षड्ज स्वर की किस पक्षी से तुलना की गई है ?

(ग) संगीत रत्नाकर में कुल कितने रागों का वर्णन मिलता है **?**
(घ) पं0 व्यंकटमुखी ने सर्वाधिक कितने मेल बताए हैं ?
(ड.) पं0 अहोबल के शुद्ध एवं विकृत मिलाकर कुल कितने स्वर बताए हैं ?
(च) संगीत चितांमणि के अनुसार ग्रामणी स्वर का किस श्रुति पर होना अनिवार्य है ?

4. लघु उत्तरीय प्रश्न :–

(क) नारदीय शिक्षा में वर्णित श्रुति व्यवस्था को संक्षेप में बताइये।
(ख) संगीत रत्नाकर के प्रबन्धाध्याय का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
(ग) पं0 व्यंकटमुखी के स्वर प्रकरण को संक्षेप में समझाइये।
(घ) संगीत पारिजात में वर्णित शुद्ध एवं विकृत स्वरों को बताइये।
(ड.) संगीत मकरंद में स्वरों की तुलना किन पशु–पक्षियों से की गई है ? बताइए।
(च) संगीत चिंतामणी में वर्णित भारतीय वाद्य परम्परा को संक्षेप में समझाइये।

2.11 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके हैं कि धरती पर सदियों वर्ष पूर्व से लेकर भरत काल तक एवं छठी–सातवी शताब्दियों से मध्यकाल तक सभ्यता के सभी युगों में संगीत की उन्नत अवस्था का परिचय प्राप्त होता है, जिसमें गायन, वादन, नृत्य और नाट्य को आवश्यकतानुसार महत्व एवं प्रश्रय प्राप्त था। अतः विभिन्न कालों में लिखित ग्रन्थों में जो संगीत के सिद्धान्त और नियम बताए गए हैं वे अब भी मान्य हैं। परन्तु इस पद्धति का विस्तृत पालन वर्तमान में नहीं होता है। प्राचीन कालीन ग्रंथ नारदीय शिक्षा एवं संगीत मकरंद में संगीत शास्त्र से संबंधित मूलभूत तत्वों तथा सामगान का विशेष उल्लेख है। मध्यकालीन ग्रंथ संगीत रत्नाकर एवं चर्तुदण्डिप्रकाशिका एवं संगीत–पारिजात में प्राप्त सामग्री का वर्तमान से जुड़े विभिन्न सांगीतिक तत्वों से विशेष रुप से संबंध स्थापित किया जा सकता है। आधुनिक कालीन ग्रंथ संगीतांजलि एवं संगीत चिन्तामणि प्रयोगात्मक दृष्टि से वर्तमान में सभी स्तर के शिक्षार्थियों के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। संगीत शास्त्र सम्बन्धी विशिष्ट जानकारी जो हमें प्राचीन एवं मध्यकालीन ग्रन्थों में प्राप्त होती है उन्हीं सिद्धान्तों के आधार पर आज भी पूरी सांगीतिक व्यवस्था टिकी हुई है। प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इकाई में दिए गए संगीत ग्रन्थों में वर्णित संगीत सम्बन्धित पहलुओं से भी अवगत हो चुके होंगे।

2.12 शब्दावली

1. **नादात्मक** – मधुर स्वर से परिपूर्ण ध्वनि।
2. **द्विश्रुतिक, त्रिश्रुतिक एवं चतुर्श्रुतिक** – भारतीय शास्त्रीय संगीत में सात स्वर विभिन्न श्रुतियों पर स्थापित माने गये हैं। प्राचीन समय से 22 श्रुतियों का प्रचलन था। प्रत्येक स्वर की श्रुतियाँ भिन्न–भिन्न हैं। जैसे षड़ज एवं पंचम, चतुर्श्रुतिक है; गन्धार एवं निशाद, त्रिश्रुतिक तथा धैवत एवं ऋषभ, द्विश्रुतिक है।
3. **जाति गायन** – जिस प्रकार वर्तमान में राग गायन प्रचलित है, उसी प्रकार प्राचीन समय में जाति गायन का प्रचलन था।
4. **श्रुति** – कानों से सुनी जा सकने वाली सूक्ष्म ध्वनि।
5. **ग्राम–मूर्च्छना** – निश्चित सप्तक के सात स्वर समूहों के भाग को ग्राम कहते हैं। सप्तक में क्रमानुसार पॉच, छः या सात स्वरों का विशेष क्रमयुक्त प्रयोग मूर्च्छना कहलाता है।

6. **गन्धर्व एवं गान** – यह मार्ग–देशी संगीत का प्राचीन स्वरूप है। प्रथम ईश्वर प्राप्ति तथा दूसरा जन–रंजन के लिए है।

7. **ग्रह एवं अंश स्वर** – संगीत रचना का सबसे प्रारम्भिक स्वर ग्रह स्वर है तथा इसके पश्चात महत्वपूर्ण स्वर अंश स्वर है।

2.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए :–

(क) नारदीय शिक्षा में.....**2**..... प्रपाठक हैं।
(ख) संगीत मकरंद में 6 राग एवं.....**36**.....रागिनियाँ बताई गई हैं।
(ग) संगीत रत्नाकर में कुल.....**सात**.....अध्याय हैं।
(घ) चतुर्दण्डी प्रकाशिका ग्रंथ सन्.....**1620**.....ई0 में लिखा गया।
(ड.) संगीत परिजात का शुद्ध सप्तक आधुनिक.....**काफ़ी**.....के समान था।
(च) संगीतांजलि ग्रंथ कुल.....**6**.....भागों में विभाजित है।

2. सत्य/असत्य बताइए :–

(क) नारदीय शिक्षा ग्रंथ में कुल 208 श्लोक संकलित हैं।	**असत्य**
(ख) नारद ने संगीत मकरंद ग्रंथ दसवीं शताब्दी में लिखा था।	**असत्य**
(ग) संगीत रत्नाकर में 14 विकृत स्वरों का वर्णन किया गया है।	**असत्य**
(घ) चतुर्दण्डी ग्रंथ में तीन प्रकार की वीणा का उल्लेख प्राप्त होता है।	**सत्य**
(ड.) संगीत पारिजात में कुल 122 रागों का वर्णन मिलता है।	**सत्य**
(च) संगीतांजलि ग्रंथ के तीसरे भाग में रागों का समय निर्धारण किया गया है।	**सत्य**

3. अति लघु उत्तरीय प्रश्न :–

(क) सात
(ख) मयूर
(ग) 264
(घ) 72
(ड.) 29
(च) चतुश्रुतिक

2.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. चौधरी, सुभाष रानी, *संगीत के प्रमुख शास्त्रीय सिद्धान्त*(2002), कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
2. परांजपे, डॉ0 शरच्चन्द्र श्रीधर, *संगीत बोध*(1992), मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
3. गर्ग, डॉ0 लक्ष्मी नारायण, *राग विशारद भाग–1*(2001), संगीत कार्यालय, हाथरस।
4. भातखण्डे, पं0 विष्णु नारायण, उ*त्तर भारतीय संगीत का संक्षिप्त इतिहास*(1966), संगीत कार्यालय, हाथरस।
5. ठाकुर, पं0 ओमकारनाथ, *संगीतांजलि*(1938), पं0 ओमकार नाथ मेमोरियल ट्रस्ट, मुम्बई।
6. बृहस्पति, आचार्य, *संगीतचिन्तामणि*(1966) भाग–1, बृहस्पति पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।

2.15 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. बसन्त, संगीत विशारद(1997), संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. गोबर्धन, डॉ0 शान्ति, संगीत शास्त्र दर्पण भाग–2 (1989), पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
3. पाठक, पं0 जगदीश नारायण, संगीत शास्त्र प्रवीण(1995), पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।

2.16 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पण्डित अहोबल रचित संगीत पारिजात ग्रंथ का विस्तार पूर्वक विवेचन कीजिए।
2. मध्यकालीन ग्रन्थ 'संगीत–रत्नाकर' के विषय में एक निबन्ध लिखिये।

इकाई 3 – संगीत संबंधी विषयों पर निबन्ध लेखन

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 निबन्ध की व्याख्या
3.4 निबन्ध के अवयव
3.4.1 भूमिका
3.4.1.1 संगीत शिक्षा विषय की भूमिका
3.4.2 विषय वस्तु
3.4.2.1 गुरूमुख द्वारा संगीत शिक्षा
3.4.2.2 संगीत संस्थाओं द्वारा संगीत शिक्षा
3.4.2.3 विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में संगीत शिक्षा
3.4.3 उपसंहार –संगीत शिक्षा विषय पर
3.5 सारांश
3.6 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.7 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर (एम0पी0ए0एम0टी0–606) पाठ्यक्रम की तीसरी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप विद्वान संगीतज्ञों के महत्वपूर्ण योगदान तथा उनकी संगीत साधना के प्रति लगन एवं परिश्रम को जान चुके होंगे। आप भारतीय संगीत के ग्रन्थों का ज्ञान भी प्राप्त कर चुके होंगे।

इस इकाई में निबन्ध लेखन के विषय में आपको कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों से अवगत कराया जाएगा। निबन्ध लिखते समय किन–किन बातों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है यह भी इस इकाई में वर्णित है।

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप निबन्ध लेखन की विधि तथा निबन्ध लेखन के अवयवों से परिचित होंगे। आप किसी भी विषय पर निबन्ध लिखने में सक्षम हो सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :–

- निबन्ध लेखन के अवयवों का सही प्रयोग कर सकेंगे।
- अपनी लेखन शैली का विकास कर सकेंगे।
- किसी भी विषय में आप व्यवस्थित रूप से निबन्ध प्रस्तुत कर सकेंगे।

3.3 निबन्ध की व्याख्या

निबन्ध के विषय में आपने पूर्व में काफी सुना है तथा प्राथमिक कक्षाओं से ही निबन्ध लेखन का अभ्यास कराया जाता है। प्रत्येक स्तर पर निबन्ध का स्तर भी पृथक होता है। निबन्ध किसी विषय विशेष की समग्र रूप में व्यवस्थित व्याख्या है। निबन्ध में विषय से सम्बन्धित समस्त पहलुओं पर विचार प्रस्तुत किये जाते हैं। अतः निबन्ध में विषय की व्याख्या का स्वरूप व्यापक हो जाता है। विषय से सम्बन्धित पूर्व की उपलब्ध जानकारी को निबन्ध में समाहित कर उसका विश्लेषण किया जाता है और लेखक समालोचना के लिए भी स्वतंत्र रहता है। निबन्ध के माध्यम से लेखक व्याप्त भ्रान्तियों को भी दूर करने की चेष्टा करता है। इसी सन्दर्भ में निबन्ध और लेख के अन्तर को भी समझने की आवश्यकता है।

लेख प्रायः समस्या को लेकर आरम्भ किया जाता है एवं समस्या का निराकरण ही किसी लेख का मूल उद्देश्य रहता है। विद्यालय स्तर पर आपको दृश्यों का ऑखों देखा वर्णन निबन्ध के रूप में लेखन का अभ्यास करवाया गया है। परन्तु विश्वविद्यालय स्तर पर निबन्ध, विषय से ही सम्बन्धित रहता है और उस विषय के बारे में आपको समस्त जानकारी और यदि आवश्यक हो तो गुण–दोष के साथ प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। लेख सामान्य विषय पर वक्तव्य रूप में रहता है। निबन्ध लेखन अभ्यास से ही आप लेख लिखने एवं शोध पत्र लिखने में भी सक्षम हो जाते हैं। अतः निबन्ध लेखन के अभ्यास से आपकी लेखन क्षमता बढ़ती है और आप अपने विचारों को कलम के माध्यम से प्रस्तुत करने की तकनीक भी विकसित कर पाते हैं। इस इकाई में स्नातकोत्तर स्तर के विषयों के निबन्ध की लेखन विधि पर चर्चा की जाएगी।

3.4 निबन्ध के अवयव

किसी भी विषय पर निबन्ध को प्रायः निम्न भागों में बॉटकर विषय की व्याख्या प्रस्तुत करते हैंः

1. भूमिका **2. विषयवस्तु** **3. उपसंहार**

3.4.1 भूमिका – इसके अन्तर्गत विषय के बारे में जानकारी देते हुए व्याख्या के अन्तर्गत आने वाले सन्दर्भों के बारे में बताते हैं। भूमिका के माध्यम से निबन्ध का स्वरूप पता चल जाता है। व्याख्या किन–किन बिन्दुओं पर केन्द्रित होनी है इसका संक्षिप्त परिचय भी भूमिका के माध्यम से दिया जाता है। भूमिका में विषय प्रवेश प्रस्तुत किया जाता है अर्थात विषय क्या है एवं विषय पर निबन्ध के माध्यम से हम विषय के सन्दर्भ में क्या–क्या चर्चा करेंगे।

उदाहरण के रूप में संगीत शिक्षा विषय के माध्यम से आपको निबन्ध की लेखन शैली से परिचित कराएंगे।

3.4.1.1 संगीत शिक्षा विषय पर भूमिका – प्राचीन काल से ही संगीत का सन्दर्भ हमें सामवेद से प्राप्त होता है तथा वैदिक समय में ऋचाओं के गान की शिक्षा गुरूमुख से देने की परम्परा थी और इस परम्परा का निर्वाह काफी समय तक रहा। संगीत का वास्तविक स्वरूप क्रियात्मक है। अतः इसकी शिक्षा भी क्रियात्मक रूप में देने से ही संगीत का स्वरूप स्पष्ट हो पाता है। यद्यपि संगीत से सम्बन्धित अवयवों की व्याख्या समय–समय पर विभिन्न संगीत मनीषियों के द्वारा दी जाती रही है परन्तु संगीत को क्रियात्मक स्वरूप में प्रस्तुत करने के लिए शिष्य को गुरूमुख से ही शिक्षा ग्रहण करनी होती थी, जिसके लिए गुरूकुल की व्यवस्था रहती थी। वर्तमान में संगीत शिक्षा का स्वरूप बदल चुका है जिसकी चर्चा आगे की जाएगी। संगीत को विषय के रूप में समझा जाने लगा है जिससे उसकी शिक्षा भी उसी के अनुरूप होने लगी है। जबकि संगीत को कला के रूप में ही समझने की आवश्यकता है। वर्तमान में संगीत हेतु शिक्षा के विभिन्न माध्यमों का अध्ययन कर उनके गुण दोष पर इस निबन्ध के माध्यम से विचार किया जाएगा।

संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध की भूमिका उदाहरण स्वरूप आपके लिए प्रस्तुत की गई है जिससे आप किसी भी विषय पर निबन्ध हेतु भूमिका लिखने में सक्षम हो पाएंगे।

3.4.2 विषयवस्तु – भूमिका के पश्चात निबन्ध के विषय की विषयवस्तु प्रस्तुत की जाती है जिसमें विषय से सम्बन्धित सभी सन्दर्भों को प्रस्तुत किया जाता है। किसी विषय पर विषयवस्तु किस प्रकार लिखी जाती है इसका ज्ञान संगीत शिक्षा विषय पर उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत विषयवस्तु से जान सकेंगे।

संगीत शिक्षा विषय की विषयवस्तु – पहले संगीत की शिक्षा गुरूमुख से ही प्राप्त की जाती थी। परन्तु बाद में संगीत शिक्षा के नये स्वरूप भी स्थापित हुए। संगीत शिक्षा के स्वरूप निम्न प्रकार से हैः

1. गुरूमुख द्वारा संगीत शिक्षा।
2. संगीत संस्थाओं द्वारा संगीत शिक्षा।
3. विद्यालयों एव विश्वविद्यालयों द्वारा संगीत शिक्षा।

3.4.2.1 गुरूमुख द्वारा संगीत शिक्षा – संगीत की शिक्षा शिष्य द्वारा गुरू के पास रहकर ही प्राप्त की जाती थी। इस शिक्षा पद्धति में शिष्य को अनुशासित होकर शिक्षा प्राप्त करनी होती थी। गुरू द्वारा शिष्य की लगन, धैर्य आदि को परखकर शिष्य को स्वीकार किया जाता था। गुरू द्वारा शिष्य को स्वीकार करने के पश्चात शिष्यत्व की औपचारिक घोषणा 'गंडा रस्म' अदायगी के साथ होती थी। इसमें गुरू और शिष्य एक दूसरे को 'धागा' बाँधकर प्रतिबद्धता का संकल्प लेते थे। इस प्रकार की शिक्षा में कोई निश्चित पाठ्यक्रम नहीं होता था और न ही संगीत शिक्षा की समयावधि निश्चित होती थी। गुरू द्वारा शिष्य की क्षमता के आधार पर ही शिक्षा दी जाती थी। एक ही गुरू के कई शिष्य होते थे, परन्तु यह आवश्यक नहीं था कि सबको एक ही शिक्षा दी जाए। दी हुई संगीत शिक्षा का अभ्यास भी गुरू के निर्देशन में ही होता था। संगीत शिक्षा के अतिरिक्त संगीत सुनने का मार्ग निर्देशन का उद्देश्य यह था कि शिष्य अपना विवेक एवं धैर्य ना खो बैठे। इस प्रकार की शिक्षा में धैर्य का बहुत महत्व था और लगन से गुरू द्वारा दिये गये अभ्यास के नियमों से कठिन अभ्यास करने की आवश्यकता होती थी। गुरू जब तक शिष्य को कार्यक्रम प्रस्तुत करने के अनुकूल नहीं समझता था तब तक शिष्यों को कार्यक्रम प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं होती थी। बल्कि शिष्य को कार्यक्रम के योग्य समझने के पश्चात ही शिष्य को संगीतकारों के मध्य प्रस्तुत किया जाता था जिससे वह सभी संगीतज्ञों का आशीर्वाद प्राप्त करें। इस प्रकार की संगीत शिक्षा में शिष्य, गुरू के सानिध्य में संगीत के गूढ़ रहस्यों को जानता था। संगीत में घराने स्थापित हुए एवं घरानों की शिक्षा इस संगीत शिक्षा पद्धति में ही सम्भव थी। शिष्य अपने गुरू के घराने से सम्बन्धित हो जाता था और उस घराने का प्रतिनिधित्व प्राप्त करने में अपना गौरव समझता था।

3.4.2.2 संगीत संस्थानों द्वारा संगीत शिक्षा – आधुनिक समय में संगीत संस्थानों का महत्व बढ़ गया है। पंडित विष्णु नारायण भातखण्डे एवं विष्णु दिग्बर पलुस्कर ने संगीत शिक्षा का प्रचार इस प्रकार किया जिससे संगीत क्रियात्मक रूप में विकसित होने लगा। गुरूमुख शिक्षा पद्धति में बहुत कम लोग ही शिक्षा प्राप्त कर पाते थे। अतः दो संगीत मनीषियों ने संगीत के अधिक प्रचार एवं प्रसार हेतु संगीत संस्थानों की कल्पना की। पंडित विष्णु नारायण भतखण्डे द्वारा लखनऊ में 'मैरिस कालेज आफ म्यूजिक' एवं विष्णु दिगम्बर पलुस्कर द्वारा पूना में 'गन्धर्व मंडल' की स्थापना की गई जिसके अन्तर्गत देश के कई शहरों में 'गन्धर्व संगीत महाविद्यालय' के नाम से संगीत शिक्षण संस्थान खोले गये। यह संगीत शिक्षण की औपचारिक व्यवस्था का आरम्भ था। इन संस्थानों में प्रत्येक वर्ष के लिए पाठ्यक्रम निश्चित किये गये तथा वर्ष के अन्त में परीक्षा की भी व्यवस्था की गई। इन संस्थानों में संगीत के गुणीजन, गुरू अथवा उस्तादों को संगीत शिक्षा हेतु आमंत्रित किया गया और इनके लिए किसी प्रकार के औपचारिक प्रमाण–पत्रों की बाध्यता नहीं रखी गई।

संगीत के विद्यार्थियों को परीक्षा में सफल होने पर औपचारिक प्रमाण–पत्र देने की व्यवस्था भी की गई। संगीत की हर विधा और हर अंग के लिए विशेषज्ञ रखे गये। प्रतिदिन संगीत शिक्षा का समय भी निर्धारित किया गया तथा अन्य संस्थानों की भाँति इन संस्थानों में भी उत्सव एवं त्यौहारों पर अवकाश का प्रावधान था। जबकि गुरूमुख शिक्षा पद्धति में इस प्रकार की व्यवस्था नहीं रहती थी और शिष्य को गुरू के पास रहकर ही सीखना होता था और गुरू द्वारा शिष्य को किसी समय भी शिक्षा के लिए बुला लिया जाता था जिसमें शिष्य को उपस्थित होना आवश्यक होता था। संगीत संस्थानों की शिक्षा में शिष्य, गुरू के सानिध्य में निश्चित समय के लिए ही रहता है और प्राप्त की गई शिक्षा का अभ्यास स्वयं घर पर ही करता है। संगीत संस्थानों की शिक्षा पद्धति में गुरू का शिष्य

के ऊपर नियंत्रण गुरूमुखी शिक्षा पद्धति की अपेक्षा कम रह पाता है। प्रारम्भ में इन संस्थानों में संगीत की शिक्षा हेतु पाँच–छः वर्षो का पाठ्यक्रम निर्धारित किया गया। संस्थानों में पाँच–छः वर्ष की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त भी यह माना गया कि इसके पश्चात भी शिष्य को गुरू के सानिध्य की निरन्तर आवश्यकता रहती है। इन दो संस्थानों की स्थापना के पश्चात प्रयाग (इलाहाबाद) में 'प्रयाग संगीत समिति' एवं पंजाब के चंडीगढ़ क्षेत्र में प्राचीन कला संगीत संस्थान की स्थापना हुई। इन सभी संस्थानों ने देश के भिन्न–भिन्न शहरों में अपने केन्द्र स्थापित किये और इन केन्द्रों पर शिक्षा का प्रचार हुआ एवं विद्यार्थियों को प्रमाण–पत्र मिलने लगे।

गुरूमुखी शिक्षा में गुरू एवं शिष्य दोनों का ही लक्ष्य कलाकार बनना तथा बनाना होता था जिसके लिए शिष्य द्वारा अनुशासित अभ्यास किया जाता था और संगीत ही एकमात्र लक्ष्य रहता था। संगीत संस्थानों में ऐसे भी विद्यार्थी शिक्षा लेते थे जिनका लक्ष्य केवल संगीत ही नहीं होता था बल्कि वे संगीत की शिक्षा शौकिया रूप में लेते थे। अतः संगीत संस्थानों में संगीत के विद्यार्थियों को समूह में एकरूपता नहीं रहती थी। गुरू द्वारा भी एक ही कक्षा के समस्त विद्यार्थियों को लगभग एक जैसी ही शिक्षा दी जाती थी जो कि संस्थानों के शिक्षा व्यवस्था की आवश्यकता एवं सीमा भी थी। अतः संगीत संस्थानों से शिष्य उस प्रकार की शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाते थे जिस प्रकार की शिक्षा गुरू–शिष्य परम्परा पद्धति में प्राप्त होती थी। संगीत संस्थानों का उद्देश्य संगीत शिक्षा के माध्यम से संगीत का प्रचार एवं प्रसार था और यह सामान्य रूप से संस्थानों के उद्देश्य के बारे में कहा जाता था कि संस्थान तानसेन नहीं तो कानसेन तो बना ही देते हैं। अर्थात संगीत कलाकार ना भी बन पायें तो संगीत का एक अच्छा श्रोता तो बन ही जाता है। इन संगीत संस्थानों ने विभिन्न शहरों में अपने परीक्षा केन्द्र खोले जहाँ पर संगीत शिक्षा देने का भी प्रावधान किया गया तथा विद्यार्थी इन केन्द्रों से संगीत सीखकर प्रमाण–पत्र प्राप्त करने लगे। इन प्रमाण–पत्रों को सरकार के शिक्षा निदेशालय द्वारा मान्यता भी प्रदान की गई।

विद्यालयों में बिना इन संस्थानों के प्रमाण–पत्र के नियुक्तियाँ नहीं होती हैं। विद्यालय स्तर पर शिक्षक के लिए अन्य विषयों में बी. एड. अनिवार्य अर्हता है परन्तु संगीत विषय में शिक्षक होने के लिए बी.एड. के स्थान पर 'संगीत विशारद' एवं 'संगीत प्रभाकर' होना आवश्यक है जो कि इन संस्थानों द्वारा दिया गया प्रमाण पत्र है। इस व्यवस्था से इन केन्द्रों पर संगीत के प्रमाण–पत्र प्राप्त करने के लिए विद्यार्थियों की भीड़ बढ़ गई। इन संगीत संस्थानों में शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात कलाकार बनने के इच्छुक विद्यार्थियों को गुरू–शिष्य परम्परा के अन्तर्गत ही शिक्षा लेना अनिवार्य रहता है। इन संस्थानों द्वारा सामान्य संगीत के जिज्ञासु एवं विद्यार्थियों ने संगीत के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

3.4.2.3 विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों द्वारा संगीत शिक्षा – स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में संगीत विषय अन्य विषयों की भाँति पाठ्यक्रम में शामिल किया गया। विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में संगीत विषय का पाठ्यक्रम तैयार कर समय–सारिणी में इसका वादन (पीरियड) शिक्षण के लिए निश्चित किया गया। इनमें शिक्षण पाठ्यक्रम के अनुसार ही दिया जाता है और अध्यापक द्वारा सब विद्यार्थियों को समान रूप से ही अध्यापन कराया जाता है। स्नातक स्तर तक एक वादन प्रायः 45 मिनट का होता है जो कि संगीत की व्यवहारिकता के अनुकूल नहीं है क्योंकि 45 मिनट के अन्दर ही वाद्यों को स्वर में करना सम्भव नहीं हो पाता है। अतः देखा जा रहा है कि विश्वविद्यालय स्तर पर भी संगीत की मूल आवश्यकता वाद्यों को स्वर में करना विद्यार्थी पूर्ण रूप से

नहीं सीख पाते हैं। स्नातक स्तर तक विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों को संगीत विषय के अतिरिक्त अन्य विषयों का भी अध्ययन करना होता है अतः विद्यार्थी संगीत के प्रति पूर्ण समर्पित नहीं हो पाता है। संगीत के लिए अधिक समय की आवश्यकता होती है, जिसमें अधिक से अधिक समय देने से ही संगीत कला को समझा जा सकता है।

विद्यालय, विश्वविद्यालय में संगीत विषय प्रारम्भ होने से संगीतज्ञों को व्यवसाय तो प्राप्त हुआ परन्तु इससे संगीत शिक्षा की गुणात्मकता पर प्रभाव पड़ा। यद्यपि विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में संगीत के विद्वान भी नियुक्त हुए परन्तु इन संस्थानों की व्यवस्था में उतने समय के लिए संगीत शिक्षक भी सीमा में बँध गये। गुरू–शिष्य परम्परा पद्धति में शिष्य पूर्ण रूप से संगीत के वातावरण में रहता था और संगीत संस्थानों में भी जितने समय के लिए वह संस्थान में है उतने समय तक वह संगीत के वातावरण में रहता था है। परन्तु विद्यालय और विश्वविद्यालय में विद्यार्थी केवल संगीत के वादन(पीरियड) में ही संगीत के वातावरण से जुड़ा रहता है। विद्यालयों, विश्वविद्यालयों से उपाधि सामान्य रूप में मिलती है जिसमें संगीत एक विषय के रूप में रहता है, जबकि संगीत संस्थानों में मिलने वाली उपाधि एवं प्रमाण पत्र केवल संगीत का ही मिलता है। गुरू–शिष्य परम्परा में तो कोई औपचारिक प्रमाण–पत्र नहीं होता है, इसमें शिष्य स्वयं अपनी शिक्षा का प्रमाण प्रस्तुत करता है। विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालयों में संगीत विषय की शिक्षा, स्नातकोत्तर उपाधि के लिए दी जाने लगी है जिसमें केवल संगीत विषय का ही अध्ययन विद्यार्थी को करना होता है।

विश्वविद्यालय स्तर पर केवल स्नातकोत्तर कक्षाओं में ही विद्यार्थी संगीत के वातावरण में रहता है जो मात्र दो वर्ष के पाठ्यक्रम में निबद्ध होता है। संगीत शिक्षा की गुणात्मकता स्नातकोत्तर स्तर पर ही हो पाती है जिसका स्वरूप संगीत संस्थानों की शिक्षा जैसा रहता है। स्नातकोत्तर कक्षाओं में विद्यार्थियों को संगीत के अध्ययन और अभ्यास का समय प्राप्त होता है। विश्वविद्यालय स्तर पर स्नातक की कक्षाओं में संगीत विषय का विद्यार्थी सीमित समय जो कि उसके लिए समय सारिणी में निश्चित किया गया उसमें ही संगीत शिक्षक के सम्पर्क में रहता है। इसी उपलब्ध समय में शिक्षक का उद्देश्य निर्धारित पाठ्यक्रम पूरा करने का भी होता है। अतः गुरू–शिष्य परम्परा पद्धति एवं संगीत संस्थान द्वारा शिक्षा पद्धति की तुलना में विश्वविद्यालय द्वारा दी जाने वाली संगीत शिक्षा की गुणवत्ता में कमी रहती है। स्नातकोत्तर में भी यही स्थिति रहती है परन्तु इसमें विद्यार्थी तथा शिक्षक के पास संगीत विषय के लिए अधिक समय रहता है।

संगीत के जिज्ञासु विद्यार्थी विश्वविद्यालय शिक्षा के अतिरिक्त संगीत संस्थानों एवं गुरू की सहायता भी प्राप्त करते हैं। संगीत में शिक्षक बनने हेतु विश्वविद्यालय प्रमाण–पत्र की आवश्यकता होती है अतः विद्यार्थी संगीत हेतु विश्वविद्यालय में प्रवेश लेता है। विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों को संगीत पढ़ाना उद्देश्य है। केवल विश्वविद्यालय की संगीत शिक्षा से विद्यार्थी का कलाकार बनना कठिन है और ना ही विश्वविद्यालय का यह उद्देश्य ही है। विश्वविद्यालय में विषय से सम्बन्धित आयामों से विद्यार्थी को परिचित कराया जाता है जिससे वह भविष्य के लिए अपने विकल्प चुन सके।

विश्वविद्यालय की उपाधि प्रमाण–पत्र का महत्व संगीत की शिक्षक अर्हता के रूप में ही है। व्यवसायिक कलाकार बनने में इसका कोई महत्व नहीं है। विद्यालय एवं विश्वविद्यालय स्तर पर संगीत शिक्षक हेतु अर्हताएं एवं विश्वविद्यालय स्तर पर संगीत शिक्षक हेतु अर्हताएं व्यवहारिक नहीं है, जिससे इनमें सदैव योग्य संगीत शिक्षक नियुक्त नहीं हो पाते हैं। संगीत विषय मुख्य रूप से क्रियात्मक विषय है परन्तु नैट की परीक्षा विश्वविद्यालय में संगीत शिक्षक के लिए पास करना अनिवार्य अर्हता है।

परन्तु इस परीक्षा में संगीत विषय हेतु विद्यार्थी के क्रियात्मक ज्ञान को नहीं परखा जाता है जबकि संगीत विषय के शिक्षक के लिए क्रियात्मक ज्ञान होना आवश्यक है।

अभी तक आपने संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध हेतु भूमिका एवं विषय वस्तु का अध्ययन किया जो कि निबन्ध लेखन के लिए उदाहरण स्वरूप आपको बताया गया। किसी विषय के निबन्ध पर उपसंहार लिखने के विषय में आप संगीत शिक्षा विषय निबन्ध पर नीचे लिखे गये उपसंहार से समझेंगे।

3.4.3 उपसंहार–संगीत शिक्षा विषय पर – संगीत शिक्षा गुरू–शिष्य परम्परा, संगीत संस्थानों के माध्यम से एवं विद्यालय व विश्वविद्यालय में एक विषय के रूप में दी जाती है। गुरू–शिष्य परम्परा में गुरू और शिष्य के मध्य अटूट सम्बन्ध बन जाता है और शिष्य, गुरू के सानिध्य में रहकर संगीत के गूढ़ रहस्यों को सीखता है। इसमें गुरू एवं शिष्य दोनों का उद्देश्य कलाकार बनाना तथा बनना होता है। संगीत संस्थानों में भी केवल संगीत शिक्षा दी जाती है जिसमें विद्यार्थी सीमित समय के लिए ही गुरू के सम्पर्क में रहता है और विश्वविद्यालय शिक्षा में स्नातक स्तर पर तो बहुत ही कम समय के लिए विद्यार्थी संगीत के वातावरण में रहता है। परन्तु संगीत शिक्षक बनने हेतु संस्थानों एवं विश्वविद्यालय में प्रमाण–पत्रों की आवश्यकता होती है।

संगीत के जिज्ञासु विद्यार्थियों के लिए यह आवश्यक है कि वह संस्थानों की शिक्षा अथवा विश्वविद्यालय की शिक्षा के साथ गुरू–शिष्य परम्परा पद्धति में भी किसी गुरू से शिक्षा प्राप्त करें जिससे उसके पास संगीत शिक्षक का व्यवसाय अथवा व्यवसायिक कलाकार बनने का विकल्प रहेगा। उपरोक्त कथन से यह निष्कर्ष न निकाला जाए कि विश्वविद्यालय संगीत शिक्षा से ही अच्छा संगीत शिक्षक बन सकता है। जबकि संगीत की सही शिक्षा प्राप्त ही अच्छा शिक्षक बनेगा। वर्तमान व्यवस्था में संगीत शिक्षक हेतु सभी माध्यमों का अपना महत्व है अतः विद्यार्थी को अपने निश्चित उद्देश्य के लिए इनका चयन करने की आवश्यकता है।

संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध के माध्यम से आपने निबन्ध लेखन के विषय में ज्ञान प्राप्त किया। कुछ अन्य संगीत सम्बन्धित विषयों की सूची दी जा रही है।

अभ्यास हेतु निबन्ध के विषयः–

1. फिल्मों में संगीत
2. संगीत में इलक्ट्रोनिक उपकरण का योगदान
3. लोकसंगीत एवं शास्त्रीय संगीत
4. भक्ति एवं संगीत
5. संगीत एवं आध्यात्म
6. संगीत एवं संचार माध्यम (रेडियो व टी. वी.)
7. संगीत में अवनद्य वाद्यों की भूमिका
8. संगीत गोष्ठी

जैसा कि आपको बताया जा चुका है प्रत्येक विषय के निबन्ध का आरम्भ भूमिका से किया जाता है और निबन्ध का समापन उपसंहार से किया जाता है। उपरोक्त विषयों की विषयवस्तु आगे दी जा रही है जिसके आधार पर आप इन विषयों पर निबन्ध लिख सकेंगे।

1. **फिल्मों में संगीत**

विषयवस्तु
फिल्म में संगीत का प्रयोग
पार्श्व गायन
फिल्म में वाद्यों का प्रयोग
गायन के साथ वाद्यों का प्रयोग
पार्श्व संगीत में वाद्यों का प्रयोग
फिल्मों में संगीत का स्थान एवं उपयोगिता

2. **संगीत में इलक्ट्रोनिक उपकरणों का योगदान**

विषयवस्तु
संगीत में प्रयोग होने वाले इलक्ट्रोनिक उपकरण
(अ) इलक्ट्रोनिक तानपुरा
(ब) इलक्ट्रोनिक तबला
(स) इलक्ट्रोनिक लहरा मशीन
संगीत के संरक्षण एवं शिक्षा में सहायक इलक्ट्रोनिक उपकरण
1. ग्रामोफोन 2. टेपरिकार्डर

3. **लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत**

विषयवस्तु
लोक संगीत की पृष्ठभूमि
शास्त्रीय संगीत का परिचय
लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत का सम्बन्ध

4. **भक्ति एवं संगीत**

विषयवस्तु
भक्ति की व्याख्या
विभिन्न धर्मों में भक्ति हेतु संगीत का प्रयोग
1. हिन्दू 2. मुस्लिम 3. सिख 4. इसाई

5. **संगीत एवं आध्यात्म**

विषयवस्तु
संगीत की उत्पत्ति
वैदिक कालीन संगीत
आध्यात्म में संगीत का महत्व

6. **संगीत एवं संचार माध्यम**

विषयवस्तु
रेडियो में संगीत
टेलीविजन में संगीत
रेडियो तथा टेलीविजन का संगीत के प्रचार–प्रसार में भूमिका

7. **संगीत में अवनद्य वाद्य की भूमिका**

विषयवस्तु
संगीत का परिचय
संगीत के तत्व
संगीत के अवनद्य वाद्य
संगीत में अवनद्य वाद्यों का प्रयोग

8. **संगीत गोष्ठी**

विषयवस्तु
संगीत गोष्ठी का परिचय
संगीत गोष्ठी में कलाकार की भूमिका
विभिन्न प्रकार की संगीत गोष्ठी
संगीत गोष्ठी के श्रोता

उपरोक्त कुछ विषय आपके निबन्ध लेखन के अभ्यास के लिए दिए गए हैं। इन सभी विषयों पर आप निबन्ध लिखने का अभ्यास ऊपर अध्ययन कराई विधि के अनुसार करें। सभी विषयों पर निबन्ध के अवयव का क्रम भूमिका, विषयवस्तु एवं उपसंहार रहेगा। उपसंहार एवं भूमिका के प्रभावशाली होने से आपका निबन्ध उच्चस्तर का होता है यद्यपि विषयवस्तु भी महत्वपूर्ण है। उपसंहार में विषयवस्तु में की गई चर्चाओं अथवा विवरणों से प्रकट तथ्यों को परिणाम स्वरूप में प्रस्तुत किया जाता है। आप को इन सबका ज्ञान संगीत शिक्षा विषय पर उदाहरण स्वरूप निबन्ध के माध्यम से दिया गया है। अतः उसी आधार पर आप उपरोक्त विषयों पर निबन्ध लेखन का अभ्यास करें।

3.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप निबन्ध लेखन की शैली से परिचित हो चुके होंगे। संगीत विषयों पर निबन्ध लेखन की शैली एवं विद्या से आपको इस इकाई के माध्यम से परिचित कराया गया। निबन्ध लेखन से आप अपने विचारों को लेखन के माध्यम से प्रकट करने की तकनीक विकसित करते है जो बाद में आपको शोधपत्र, लेख एवं शोध कार्य में सहायक सिद्ध होगी। उदाहरण स्वरूप दिए गए संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध से आप संगीत विषयों पर निबन्ध लेखन के विषय जान गए हैं एवं संगीत विषय पर लिखने में सक्षम होंगे। संगीत के गहन अध्ययन एवं संगीत के सन्दर्भों के अध्ययन से आप संगीत विषयों पर निबन्ध लिखने में सक्षम हो गए होंगे।

3.6 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. गर्ग, श्री लक्ष्मीनारायण, *निबन्ध संगीत*, संगीत कार्यालय, हाथरस।

3.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. इकाई में दिए गए अभ्यास हेतु निबन्ध विषयों में से किसी एक विषय पर निबन्ध लेखन कीजिए।

इकाई 4 – पाठ्यक्रम की तालों का परिचय व तालों के ठेकों को दुगुन, तिगुन व चौगुन की लयकारी सहित लिपिबद्ध करना

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 तालों का परिचय
- 4.3.1 रूपक ताल का परिचय
- 4.3.2 11 मात्रा की ताल का परिचय
- 4.3.3 झूमरा ताल का परिचय
- 4.3.4 सूलताल का परिचय
- 4.3.5 यतिशिखर ताल का परिचय
- 4.3.6 पश्तो ताल का परिचय

4.4 तालों को लयकारीयों में लिखना
- 4.4.1 रूपक ताल में लयकारी
- 4.4.2 11 मात्रा की ताल में लयकारी
- 4.4.3 झूमरा ताल में लयकारी
- 4.4.4 सूलताल में लयकारी
- 4.4.5 यतिशिखर ताल में लयकारी
- 4.4.6 पश्तो ताल में लयकारी

4.5 सारांश
4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम के एम0पी0ए0एम0टी0–606 की चौथी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप विद्वान संगीतज्ञों के महत्वपूर्ण योगदान तथा उनकी संगीत साधना के प्रति लगन एवं परिश्रम को जान चुके होंगे। आप भारतीय संगीत ग्रन्थों का ज्ञान भी प्राप्त कर चुके होंगे।

इस इकाई में पाठ्यक्रम की तालों का परिचय व उनके ठेकों को विभिन्न लयकारी (दुगन, तिगुन व चौगुन) में लिपिबद्ध करने के विषय में बताया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पाठ्यक्रम की तालों के ठेकों एवं उनको विभिन्न लयकारी में लिपिबद्ध करने के विषय में जान सकेंगे। इससे आप लयकारी को बोलने एवं बजाने में भी सक्षम होंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात :–

1. आपको लयकारी का ज्ञान हो सकेगा।
2. आप तबले की ताल के ठेकों को विभिन्न लयकारी में लिपिबद्ध एवं उसके क्रियात्मक स्वरूप को तबले में प्रस्तुत कर पाएंगे।
3. आप लयकारी का प्रयोग अपने वादन(एकल वादन व संगत) करने में सक्षम होंगे जिससे आप का वादन प्रभावशाली होगा।

4.3 तालों का परिचय

4.3.1 रूपक ताल का परिचय :–

परिचय – यह तीन विभाग में विभक्त सात मात्रा की विषम पदीय ताल है। यह उत्तर भारतीय ताल पद्धति की ऐसी ताल है जिसकी पहली मात्रा पर सम के स्थान पर खाली दिखाई जाती है, जो कि एक अपवाद है। क्योंकि सम एवं ताली पहली मात्रा पर ही माना जाता है। इस ताल का प्रयोग शास्त्रीय संगीत की रचनाओं एवं सुगम संगीत भजन, गीत एवं गज़ल में किया जाता है। रूपक ताल में एकल वादन भी किया जाता है। इसका प्रयोग मध्य लय में ही करना अधिक उचित है।

मात्रा – 7, विभाग – 3, ताली – 4 व 6 पर, खाली – 1 पर

ठेका

ती	ती	ना	धी	ना	धी	ना	ती
0			2		3		0

4.3.2 11 मात्रा की ताल का परिचय :–

परिचय – भारतीय शास्त्रीय संगीत में 11 मात्रा की विभिन्न तालें हैं, जैसे रूद्र ताल, अष्टमंगल ताल, कुंभ ताल एवं मणि ताल है। अष्टमंगल ताल, मणि ताल पखावज एवं रूद्र ताल तबले पर बजाई जाने वाली ताल हैं।

रूद्र ताल – रूद्र ताल तबला एकल वादन एवं गायन तथा वादन की मध्य लय की रचनाओं हेतु प्रयोग की जाती है। यह समपदीय ताल है। यह ताल 11 विभाग की 11 मात्रा की ताल है, अतः प्रत्येक विभाग एक मात्रा का है। इसमें पहली दो मात्रा की ताली के बाद तीसरी मात्रा पर खाली, इसके पश्चात् तीन मात्राओं की ताली के पश्चात् सातवीं मात्रा पर खाली एवं अन्त में आठवीं–नवीं एवं दसवीं मात्रा की ताली के बाद अन्तिम मात्रा खाली की है।

मात्रा – 11, विभाग – 11, ताली – 1, 2, 4, 5, 6, 8, 9 व 10 पर, खाली – 3, 7 व 11 पर

ठेका – 1

धी	ना	धी	ना	ता	ती	ना	क	ता	धि	ना	धी
×	2	0	3	4	5	0	6	7	8	0	×

मात्रा – 11, विभाग – 11, ताली – 1, 3, 4, 5, 7, 8, 9 व 10 पर, खाली – 2, 6 व 11 पर

ठेका – 2

धा	त्त	धा	तिरकिट	धी	ना	तिरकिट	तू	ना	क	त्ता	धा
×	0	2	3	4	0	5	6	7	8	0	×

अष्टमंगल ताल – यह एक समपदीय ताल है। इसका प्रयोग ध्रुपद गायन शैली के साथ संगत के लिए तथा एकल वादन के लिए किया जाता है। कुछ विद्वान इसे 22 मात्रा का भी मानते हैं, जो पखावज का ठेका है। मुख्यतः इसका प्रयोग मध्य व द्रुत लय में बजाने के लिए किया जाता है। पखावज व तबले पर इसका अलग–अलग ठेका है।

मात्रा – 22, विभाग – 11, ताली – 1, 5, 7, 11, 13, 17, 19 व 21 पर, खाली – 3, 9 व 15 पर

ठेका – पखावज

धा ऽ	कि ट	त क	धु म	कि ट	त क	धे ऽ	ता ऽ	क त	ग दि	ग न	धी
×	0	2	3	0	4	5	0	6	7	8	×

ठेका – तबला

मात्रा – 11, विभाग – 11, ताली – 1, 3, 4, 6, 7, 9, 10 व 11 पर, खाली – 2, 5 व 8 पर

धी	ना	धी	धी	ना	धी	धी	ना	धागे	नधा	तिरकिट	धी
×	0	2	3	0	4	5	0	6	7	8	×

कुंभ ताल – कुंभ समपदीय ताल है। यह प्राचीन होने के साथ–साथ अप्रचलित भी है। इसका प्रयोग मध्य लय की रचनाओं के साथ संगत में किया जाता है। कभी–कभी इसका प्रयोग तबला व पखावज में एकल वादन हेतु भी किया जाता है।

मात्रा – 11, विभाग – 11, ताली – 1, 3, 4, 5, 7, 8, 9 व 10 पर, खाली – 2, 6 व 11 पर

ठेका

धा	धीं	तेटे	कत	धा	धीं	नक	तेटे	कत	गदि	गन	धी
×	0	2	3	4	0	5	6	7	8	0	×

मणि ताल – यह एक विषम पदीय व अप्रचलित ताल है। यह पखावज व तबला दोनों पर समान रूप से बजाया जाता है, किन्तु इसका प्रयोग कम ही देखने को मिलता है।

मात्रा – 11, विभाग – 4, ताली – 1, 4, 6 व 9 पर

ठेका – 1

धा दीं ता	धेत्त ता	धागे नधा त्रक	धागे नधा त्रक	धा
×	2	3	4	×

ठेका – 2

धा कि ट	कि ट	धा कि ट	त कि ट	धा
×	2	3	4	×

4.3.3 झूमरा ताल का परिचय :–

परिचय – यह तबले का ताल है। इस ताल की संरचना दीपचन्दी ताल की भांति है परन्तु इस ताल का प्रयोग दीपचन्दी से भिन्न है। झूमरा ताल का प्रयोग शास्त्रीय गायन के विलम्बित ख्याल के साथ किया जाता है। इस ताल का प्रयोग विलम्बित लय में ही किया जाता है, मध्य एवं द्रुत लय इस ताल के प्रयोग का प्रचलन नहीं है। एकल वादन का प्रचलन इस ताल मे नहीं है किन्तु कुछ विद्वानों के अनुसार पुराने तबला वादकों द्वारा इसमें कभी–कभी स्वतन्त्र वादन भी प्रस्तुत किया गया है।

यह मिश्र जाति की अर्द्ध समपदीय ताल है। इसकी 14 मात्राएं 3/4/3/4 विभागों में बँटी हैं। इसमें पहला एवं तीसरा विभाग तीन–तीन मात्रा एवं दूसरा एवं चौथा विभाग चार–चार मात्रा का है। पहली, चौथी एवं ग्यारवी मात्रा पर ताली एवं आठवीं मात्रा पर खाली है।

मात्रा – 14, विभाग – 4, ताली – 1, 4 व 11 पर, खाली – 8 पर

ठेका

धिं ऽधा तिरकिट	धिं धिं धागे तिरकिट	तिं ऽता तिरकिट	धिं धिं धागे तिरकिट	धिं
×	2	0	3	×

4.3.4 सूलताल का परिचय :–

परिचय – इसे सूलफाक अथवा सूलफाक्ता के नाम से भी जाना जाता है। पं0 विजयशंकर मिश्र ने अपनी पुस्तक तबला पुराण में लिखा है – "मोहम्मद करम इमाम ने सूलताल को अमीर खुसरो द्वारा रचित 17 तालों में से एक माना है। आचार्य बृहस्पति ने अदन उल मूसीकी नामक पुस्तक के आधार पर इस ताल का नाम उसूले–फाख्ता दिया है, जो बाद में बिगड़कर सूलफाख्ता हो गया। उसूल का अर्थ सिद्धान्त होता है और फाख्ता पंडुक (गुलगुचया) नामक चिड़िया को कहते हैं। लोगों का मत है कि इस चिड़िया की बोली के आधार पर इस ताल की रचना हुई है। फाख्ता की बोली कुछ इस प्रकार होती है – कू ऽ ऽ ऽ कू ऽ कू ऽ ऽ ऽ"

यह पखावज पर बजाई जाने वाली प्रमुख तालों में से एक है। मुख्यतः इसका वादन मध्य व द्रुत लय में होता है। गायन में ध्रुपद शैली की मध्य लय की रचनाओं व वादन में वीणा के साथ संगति में इसका प्रयोग होता है। पखावज में इस ताल में एकल वादन भी प्रस्तुत किया जाता है।

यह चतस्त्र जाति की सम पदीय ताल है। इसकी मात्राओं की संख्या 10 है, जो पाँच विभागों में बँटी है। इसके प्रत्येक विभाग में दो–दो मात्राएं हैं। एक, पांच एवं सातवीं मात्रा पर ताली एवं तीसरी तथा नौवीं मात्रा पर ताली है।

मात्रा – 10, विभाग – 5, ताली – 1, 5 व 7 पर, खाली – 3 व 9 पर

ठेका

धा	धा	दिं	ता	किट	धा	तिट	कता	गदि	गन	धा
×		0		2		3		0		×

4.3.5 यतिशिखर ताल का परिचय :–

परिचय – यह एक अप्रचलित ताल है। यह दस विभाग में विभक्त पन्द्रह मात्रा की विषम पदीय ताल है। संगीत के ग्रन्थों में इस ताल के विषय में कोई भी पुख्ता व विस्तृत जानकारी उपलब्ध नहीं है। इसका पहला, चौथा, पांचवां, सातवां व आठवां विभाग एक मात्रा एवं अन्य विभाग दो मात्रा के हैं। इसमें खाली नहीं होती है।

मात्रा – 15, विभाग – 10, ताली – 1, 2, 4, 6, 7, 8, 10, 11, 12 व 14 पर

ठेका

धा	तत	धिं	ना	त्रक	धिं	धिं	ना	तत	धागे	नधा	त्रक	धिं	गदि	गन	धा
×	2		3		4	5	6		7	8	9		10		×

4.3.6 पश्तो ताल का परिचय :–

परिचय – यह ताल लोक संगीत से प्रभावित है। इस ताल की संरचना रूपक की भांति है परन्तु ठेके के बोल में परिवर्तन होने से ताल का स्वरूप भिन्न है। यह अप्रचलित ताल है। कुछ विद्वानों के अनुसार यह अमीर खुसरो द्वारा निर्मित है। चंचल प्रकृति होने के कारण इसका अधिकतर प्रयोग द्रुत लय में होता है। कभी–कभी विशिष्ट संगीत रचना के साथ इसका प्रयोग विलम्बित एवं मध्य लय में भी किया जाता है। इसका प्रयोग गजल, गीत, भजन आदि के साथ–साथ टप्पा गायकी के साथ भी होता है। यह ताल तबला, ढोलक, नक्कारा, ताशा पर बजाया जाता है। यह ताल 3 विभागों में 3/2/2 प्रकार से विभक्त है। इसमें खाली नहीं होती है।

मात्रा – 7, विभाग – 3, ताली – 1, 4 व 6 पर

ठेका

त्रक	धिं	ऽ	धा	गे	तिं	ऽ	त्रक
×			2		3		×

4.4 तालों को लयकारीयों में लिखना

लयकारी – समय की समान गति को लय कहते हैं। दो मात्राओं की क्रिया के मध्य होने वाला विश्रांति काल ही लय है और जब यह काल प्रयोग होने वाली मात्राओं के बीच समान रहता है तो वह निश्चित लय का स्वरूप ले लेता है। अतः लय का सम्बन्ध मात्रा एव मात्राओं के बीच के समय से है।

लय समान्य रूप से तीन प्रकार की मानी गई है। विलम्बित, मध्य एवं द्रुत लय। काल के लम्बा होने पर विलम्बित लय स्थापित होती है। इस काल के कम होने पर मध्य लय एवं उससे अधिक कम होने पर द्रुत लय हो जाती है। सामान्य रूप से मध्य लय का विश्रांति समय विलम्बित लय के विश्रांति समय का आधा होता हैं एवं द्रुत लय का विश्रांति मध्य लय में विश्रांति समय का आधा होता है। संगीत में यह मान्यता स्थापित हो चुकी है एवं प्रचलन में है। विलम्बित लय को आधार लय मानने से मध्य लय का प्रयोग विलम्बित लय में दो बार एवं द्रुत लय का प्रयोग चार बार करने की आवश्यकता होगी अतः मध्य लय विलम्बित लय की दुगुनी, द्रुत लय मध्य लय की दुगुन होती है। लय का यही प्रयोग लयकारी कहलाता है। एक मात्रा में एक से अधिक मात्राओं का आधार लय के साथ प्रयोग लयकारी कहलाता है।

संगीत में विभिन्न लयकारी जैसे दुगुन, तिगुंन, चौगुन, आड, कुआड, एवं बिआड प्रयोग की जाती है।

दुगुन – एक मात्रा में दो मात्रा — 1 2 1 2

तिगुन – एक मात्रा में तीन मात्रा — 1 2 3 123

चौगुन – एक मात्रा में चार मात्रा — 1234 1234

आड़ – एम मात्रा में डेढ़ मात्रा अथवा दो मात्रा में तीन मात्रा को आड़ लयकारी को ड़योडी लय भी लय कहा जाता हैं एवं इसको 3/2 की लयकारी के रूप में भी व्यक्त करते हैं। — 1 ऽ 2 ऽ 3 ऽ

कुआड़– इस लयकारी के विषय में दो मत हैं। पहला– आड़ की आड़ को कुआड कहते हैं अतः 9/4 जिसके अनुसार चार मात्रा में नौ मात्रा अथवा एक मात्रा में $2\frac{1}{4}$ अथवा सवा दो मात्रा का प्रयोग करते हैं। दूसरा – 5/4 की लयकारी अर्थात चार मात्रा में पांच मात्रा अथवा एक मात्रा में सवा मात्रा। इस दूसरे मत का अधिक प्रचलन है एवं इसको सवागुन की लयकारी भी कहते हैं।

पहले मत के अनुसारः–

1S S S 2S S S 3 S S S 4 SS S 5 S S S 6 S S S 7 S S S 8 S S S 9 S S S

1 2 3 4

दूसरे मत के अनुसारः–

1 S S S 2 S S S 3 S S S 4 S S S 5 S S S

1 2 3 4

बिआड़ लय – इस लयकारी के विषय में भी दो मत हैं। एक मत के अनुसार कुआड़ लय की आड़, बिआड़ लयकारी होती जिसे $^{9}/_{4} \times {}^{3}/_{2} = \frac{27}{8}$ के रूप में व्यक्त करते हैं। दूसरे मत के अनुसार $^{7}/_{4}$की लयकारी बिआड़ की लयकारी है। इसमें एक मात्रा में पैने दो गुन मात्रा प्रयोग की जाती है। इसे पौने दो गुन की लयकारी भी कहते हैं।

पहले मत के अनुसार :–

1S S S S S S 2 S S S S S S 3 S S S S S S 4 S S

S S S S S 5 S S S S S S S 6 S S S S S S S 7 S S S S S

S S 8 S S S S S S S 9 S S S S S S S S 10 S S S S S S S 11

S S S S S S S 12 S S S S S S S 13 SS S S S S S 14 S S S

SS S S 15 S S S S S S S 16 S S S S S S S 17 S S S S S

SS 18 S S S S S S S 19 S S S S S S S 20 S S S S S S S 21 S

S S S S S S 22 S S S S S S S 23 S S S S S S S 24 S S S S

S S S 25 S S S S S S S 26 S S S S S S S 27 S S S S S S S

दूसरे मत के अनुसार :–

1 S S S 2 S S S 3 S S S 4 S S S 5 SS S 6 S S S 7 SS S

कुआड़ एवं बिआड़ के सम्बन्ध में दूसरा मत ही अधिक प्रचलित एवं व्यवहारिक है, अतः लयकारी लिपिबद्ध करने में दूसरे मत का ही प्रयोग करेंगे। आड, कुआड़ एवं बिआड़ लयकारी लिखने के लिए इनकी भिन्न अथवा बटे में दिखाई संख्या से भाग देते हैं। गणित के अनुसार भाग देने में बटे की संख्या उलटी हो कर गुणा में बदल जाती है।

उदाहरण आड़ को बट्टा संख्या $3/2 = 1\frac{1}{2}$

आड़ लयकारी की मात्रा संख्या = ताल की मात्रा × $2/3$, किस मात्रा से आरम्भ की जानी है, इसके लिए उपर की संख्या को ताल की मात्रा संख्या से घटाते हैं।

ताल की मात्रा संख्या – ताल की भाग संख्या × $2/3$ जो लयकारी लिखनी है। उसमें बट्टा के नीचे वाली राशी में से एक घटाकर उतनी संख्या के अवग्रह लगाते हैं।

उदाहरण– आड़ की लयकारी – $3/2 =$ 2–1= 1

कुआड़ की लयकारी – $5/4 =$ $4 - 1 = 3$

बिआड़ की लयकारी – $7/4 =$ $4 - 1 = 3$

अतः आड़ की लयकारी को मात्रा के साथ एक अवग्रह, कुआड़ एवं बिआड़ की लयकारी में तीन अवग्रह लगाते हैं। इसके पश्चात बट्टा की ऊपर वाली राशि में विभाग बना लेते हैं। सरलता के लिए पीछे से विभाग बनाना शुरू करते हैं एवं पहली मात्रा में जितनी मात्रा कम होती है, मात्रा से पहले उतने अवग्रह लगा देते हैं जो कि आप विभिन्न तालों में लयकारी के उदाहरण से समझेंगे।

4.4.1 रूपक ताल में लयकारी :–

रूपक ताल

मात्रा – 7, विभाग – 3, ताली – 4 व 6 पर, खाली – 1 पर

ठेका

ती	ती	ना	धी	ना	धी	ना	ती
0			2		3		0

रूपक ताल की दुगुन :–

तीती	नाधी	नाधी	नाती	तीना	धीना	धीना	ती
0			2		3		0

रूपक ताल की दुगुन एक आवर्तन में :–

1ती	तीना	धीना	धीना	ती
2		3		0

रूपक ताल की तिगुन :–

तीतीना	धीनाधी	नातीती	नाधीना	धीनाती	तीनाधी	नाधीना	ती
0			2		3		0

रूपक ताल की तिगुन एक आवर्तन में :–

12ती	तीनाधी	नाधीना	ती
	3		0

रूपक ताल की चौगुन :–

तीतीनाधी	नाधीनाती	तीनाधीना	धीनातीती	नाधीनाधी	नातीतीना	धीनाधीना	ती
0			2		3		0

रूपक ताल की चौगुन एक आवर्तन में :–

1तीतीना	धीनाधीना	ती
3		0

4.4.2 11 मात्रा की ताल में लयकारी :–

रूद्र ताल

मात्रा – 11, विभाग – 11, ताली – 1, 2, 4, 5, 6, 8, 9 व 10 पर, खाली – 3, 7 व 11 पर

ठेका – 1

धी	ना	धी	ना	ता	ती	ना	क	त्ता	धि	ना	धी
×	2	0	3	4	5	0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की दुगुन :–

धीना	धीना	ताती	नाक	त्ताधि	नाधी	नाधी	नाता	तीना	कत्ता	धिना	धी
×	2	0	3	4	5	0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की दुगुन एक आवर्तन में :–

1धी	नाधी	नाता	तीना	कत्ता	धीना	धी
5	0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की तिगुन :–

धीनाधी	नाताती	नाकत्ता	धिनाधी	नाधीना	तातीना	कत्ताधि	नाधीना	धीनाता	तीनाक	त्ताधिना	धी
×	2	0	3	4	5	0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की तिगुन एक आवर्तन में :–

1धीना	धीनाता	तीनाक	त्ताधीना	धी
6	7	8	0	×

रूद्र ताल की चौगुन :–

धीनाधीना	तातीनाक	त्ताधिनाधी	नाधीनाता	तीनाकत्ता	धिनाधीना	धीनाताती
×	2	0	3	4	5	0
नाकत्ताधि	नाधीनाधी	नातातीना	कत्ताधिना	धी		
6	7	8	0	×		

रूद्र ताल की चौगुन एक आवर्तन में :–

1धीनाधी	नातातीना	कत्ताधिना	धी
7	8	0	×

4.4.3 झूमरा ताल में लयकारी :–

झूमरा ताल

मात्रा – 14, विभाग – 4, ताली – 1, 4 व 11 पर, खाली – 8 पर

ठेका

धिं	ऽधा	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तिं	ऽता	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	धिं
×			2				0			3				×

झूमरा ताल की दुगुन :–

धिंऽधा	तिरकिटधिं	धिंधागे	तिरकिटतिं	ऽतातिरकिट	धिंधिं	धागेतिरकिट	
×			2				
धिंऽधा	तिरकिटधिं	धिंधागे	तिरकिटतिं	ऽतातिरकिट	धिंधिं	धागेतिरकिट	धिं
0			3				×

झूमरा ताल की दुगुन एक आवर्तन में :–

धिंऽधा	तिरकिटधिं	धिंधागे	तिरकिटतिं	ऽतातिरकिट	धिंधिं	धागेतिरकिट	धिं
0			3				×

झूमरा ताल की तिगुन :–

धिंऽधातिरकिट	धिंधिंधागे	तिरकिटतिंऽता	तिरकिटधिंधिं	धागेतिरकिटधिं	ऽधातिरकिटधिं	धिंधागेतिरकिट	
×			2				
तिंऽतातिरकिट	धिंधिंधागे	तिरकिटधिंऽधा	तिरकिटधिंधिं	धागेतिरकिटतिं	ऽतातिरकिटधिं	धिंधागेतिरकिट	धिं
0			3				×

झूमरा ताल की तिगुन एक आवर्तन में :–

1धिंऽधा	तिरकिटधिंधिं	धागेतिरकिटतिं	ऽतातिरकिटधिं	धिंधागेतिरकिट	धिं
	3				×

झूमरा ताल की चौगुन :–

धिंऽधातिरकिटधिं	धिंधागेतिरकिटतिं	ऽतातिरकिटधिंधिं		
×				
धागेतिरकिटधिंऽधा	तिरकिटधिंधिंधागे	तिरकिटतिंऽतातिरकिट	धिंधिंधागेतिरकिट	
2				
धिंऽधातिरकिटधिं	धिंधागेतिरकिटतिं	ऽतातिरकिटधिंधिं		
0				
धागेतिरकिटधिंऽधा	तिरकिटधिंधिंधागे	तिरकिटतिंऽतातिरकिट	धिंधिंधागेतिरकिट	धिं
3				×

झूमरा ताल की चौगुन एक आवर्तन :–

12धिंऽधा	तिरकिटधिंधिंधागे	तिरकिटतिंऽतातिरकिट	धिंधिंधागेतिरकिट	धिं
3				×

4.4.4 सूलताल में लयकारी :–

सूलताल
मात्रा – 10, विभाग – 5, ताली – 1, 5 व 7 पर, खाली – 3 व 9 पर
ठेका

धा धा	दिं ता	किट धा	तिट कता	गदि गन	धा
×	0	2	3	0	×

सूलताल की दुगुन :–

धाधा दिंता	किटधा तिटकता	गदिगन धाधा	दिंता किटधा	तिटकता गदिगन	धा
×	0	2	3	0	×

सूलताल की दुगुन एक आवर्तन में :–

धाधा	दिंता किटधा	तिटकता गदिगन	धा
	3	0	×

सूलताल की तिगुन :–

धाधादिं ताकिटधा	तिटकतागदि गनधाधा	दिंताकिट धातिटकता
×	0	2
गदिगनधा धादिंता	किटधातिट कतागदिगन	धा
3	0	×

सूलताल की तिगुन एक आवर्तन में :–

12धा धादिंता	किटधातिट कतागदिगन	धा
3	0	×

सूलताल की चौगुन :–

धाधादिंता किटधातिटकता	गदिगनधाधा दिंताकिटधा	तिटकतागदिगन धाधादिंता
×	0	2
किटधातिटकता गदिगनधाधा	दिंताकिटधा तिटकतागदिगन	धा
3	0	×

सूलताल की चौगुन एक आवर्तन में :–

12धाधा	दिंताकिटधा	तिटकतागदिगन	धा
	0		×

4.4.5 यतिशिखर ताल में लयकारी :–

यतिशिखर ताल

मात्रा – 15, विभाग – 10, ताली – 1, 2, 4, 6, 7, 8, 10, 11, 12 व 14 पर

ठेका

धा	तत	धिं	ना	त्रक	धिं	धिं	ना	तत	धागे	नधा	त्रक	धिं	गदि	गन	धा
×	2		3		4	5	6		7	8	9		10		×

यतिशिखर ताल की दुगुन :–

धातत	धिंना	त्रकधिं	धिंना	ततधागे	नधात्रक	धिंगदि	गनधा
×	2		3		4	5	6
ततधिं	नात्रक	धिंधिं	नातत	धागेनधा	त्रकधिं	गदिगन	धा
	7	8	9		10		×

यतिशिखर ताल की दुगुन एक आवर्तन में :–

1धा	ततधिं	नात्रक	धिंधिं	नातत	धागेनधा	त्रकधिं	गदिगन	धा
		7	8	9		10		×

यतिशिखर ताल की तिगुन :–

धाततधिं	नात्रकधिं	धिंनात त	धागेनाधात्रक	धिंगदिग न	धाततधिं	नात्रकधिं	धिंनात त
×	2		3		4	5	6
धागेनाधात्रक	धिंगदिग न	धाततधिं	नात्रकधिं	धिंनातत	धागेनाधात्रक	धिंगदिग न	धा
	7	8	9		10		×

यतिशिखर ताल की तिगुन एक आवर्तन में :–

धाततधिं	नात्रकधिं	धिनातत्	धागेनाधात्रक	धिंगदिगन	धा
8	9		10		×

यतिशिखर ताल की चौगुन :–

धाततधिंना	त्रकधिंधिंना	ततधागेनाधात्रक	धिंगदिगनधा	ततधिंनात्रक
×	2		3	
धिंधिंनातत	धागेनाधात्रकधिं	गदिगनधातत	धिंनात्रकधिं	धिंनाततधागे
4	5	6		7
नाधात्रकधिंगदि	गनधाततधिं	नात्रकधिंधिं	नाततधागेनाधा	त्रकधिंगदिगन धा

8	9	10	×

यतिशिखर ताल की चौगुन एक आवर्तन में :–

1धाततधिं नात्रकधिंधिं	नाततधागेनाधा त्रकधिंगदिगन	धा
9	10	×

4.4.6 पश्तो ताल में लयकारी :–

पश्तो ताल

मात्रा – 7, विभाग – 3, ताली – 1, 4 व 6 पर

ठेका

त्रक धिं ऽ	धा गे	तिं ऽ	त्रक
×	2	3	×

पश्तो ताल की दुगुन :–

त्रकधिं ऽधा गेतिं	ऽत्रक धिंऽ	धागे तिंऽ	त्रक
×	2	3	×

पश्तो ताल की दुगुन एक आवर्तन में :–

1त्रक धिंऽ	धागे तिंऽ	त्रक
2	3	×

पश्तो ताल की तिगुन :–

त्रकधिंऽ धागेतिं ऽत्रकधिं	ऽधागे तिंऽत्रक	धिंऽधा गेतिंऽ	त्रक
×	2	3	×

पश्तो ताल की तिगुन एक आवर्तन में :–

12त्रक	धिंऽधा गेतिंऽ	त्रक
	3	×

पश्तो ताल की चौगुन :–

त्रकधिंऽधा गेतिंऽत्रक धिंऽधागे	तिंऽत्रकधिं ऽधागेतिं	ऽत्रकधिंऽ धागेतिंऽ	त्रक
×	2	3	×

पश्तो ताल की चौगुन एक आवर्तन में :–

1त्रकधिंऽ धागेतिंऽ	त्रक
3	×

अभ्यास प्रश्न

क. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :–

1. झूमरा ..... वाद्य का ताल है।
2. झूमरा ..... जाति की ताल है।
3. सूलताल को ..... नाम से भी जाना जाता है।
4. सूलताल ..... की ताल है।
5. 11 मात्रा की ..... तालें हैं।
6. रूद्र ताल ..... वाद्य पर बजाई जाने वाली ताल है।
7. रूपक ताल में सम पर ..... आती है।
8. यतिशिखर ताल में ..... का विभाग नहीं होता है।
9. पश्तो ताल का प्रयोग ..... गायकी के साथ होता है।

4.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पाठ्यक्रम की तालों को ठेकों एवं उनको विभिन्न लयकारी (दुगन, तिगुन व चौगुन) में लिपिबद्ध करने के विषय में जान चुके होंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप लयकारी को भली–भांति समझ चुके होंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप लयकारी का प्रयोग अपने वादन(एकल वादन व संगत) में करने में सक्षम होगे जिससे आपका वादन प्रभावशाली होगा। इससे आप लयकारी को बोलने एवं बजाने में भी सक्षम होंगे। तबले की तालों के ठेकों को विभिन्न लयकारी में लिपिबद्ध करने एवं उसके क्रियात्मक स्वरूप को तबले में प्रस्तुत कर पायेंगे।

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :–

1. तबले 2. मिश्र जाति 3. सूलफाक अथवा सूलफाक्ता 4. पखावज
5. 4(रूद्र ताल, अष्टमंगल ताल, कुंभ ताल एवं मणि ताल) 6. तबले पर
7. खाली 8. खाली 9. टप्पा गायकी

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. मिश्र, पं0 विजयशंकर, तबला पुराण, कनिष्क पब्लिशर्स, दिल्ली।
3. श्रीवास्तव, श्री गिरीश चन्द्र, *ताल परिचय,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम की किन्हीं चार तालों का पूर्ण परिचय देते हुए उनके ठेकों को दुगुन, तिगुन व चौगुन सहित लिपिबद्ध कीजिए।

इकाई 5 – पाठ्यक्रम की तालों के ठेकों को आड, कुआड, बिआड, 3/4, 4/3 व 4/5 की लयकारी सहित लिपिबद्ध करना

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 तालों को लयकारीयों में लिखना
- 5.3.1 रूपक ताल में लयकारी
- 5.3.2 11 मात्रा की ताल में लयकारी
- 5.3.3 झूमरा ताल में लयकारी
- 5.3.4 सूलताल में लयकारी
- 5.3.5 यतिशिखर ताल में लयकारी
- 5.3.6 पश्तो ताल में लयकारी

5.4 सारांश
5.5 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.6 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर (एम0पी0ए0एम0टी0–606) पाठ्यक्रम की पांचवीं इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप विद्वान संगीतज्ञों के महत्वपूर्ण योगदान तथा उनकी संगीत साधना के प्रति लगन एवं परिश्रम को जान चुके होंगे। आप भारतीय संगीत के ग्रन्थों का ज्ञान भी प्राप्त कर चुके होंगे। आप पाठ्यक्रम की तालों से भी परिचित हो चुके होंगे।

इस इकाई में पाठ्यक्रम की तालों के ठेकों को विभिन्न लयकारी (आड, कुआड, बिआड, 3/4, 4/3 व 4/5) में लिपिबद्ध करने के विषय में बताया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पाठ्यक्रम की तालों के ठेकों एवं उनको विभिन्न लयकारी में लिपिबद्ध करने के विषय में जान सकेंगे। इससे आप लयकारी को बोलने एवं बजाने में भी सक्षम होंगे।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात :–

1. आपको लयकारी का ज्ञान हो सकेगा।
2. आप ताल के ठेकों को विभिन्न लयकारी में लिपिबद्ध करने एवं उसके क्रियात्मक स्वरूप को तबले में प्रस्तुत कर पाएंगे।
3. आप लयकारी का प्रयोग अपने वादन(एकल वादन व संगत) करने में सक्षम होंगे जिससे आपका वादन प्रभावशाली होगा।

5.3 तालों को लयकारीयों में लिखना

5.3.1 रूपक ताल में लयकारी :–

रूपक ताल

मात्रा – 7, विभाग – 3, ताली – 4 व 6 पर, खाली – 1 पर

ठेका

ती	ती	ना	धी	ना	धी	ना	ती
0			2		3		0

रूपक ताल की आड़ :–

1तीऽ	तीऽना	ऽधीऽ	नाऽधी	ऽनाऽ	ती
	2		3		0

रूपक ताल की कुआड़ :–

12तीऽऽ	ऽतीऽऽऽ	नाऽऽऽधी	ऽऽऽनाऽ	ऽऽधीऽऽ	ऽनाऽऽऽ	ती
		2		3		0

रूपक ताल की बिआड़ :–

तीऽऽऽतीऽऽ	ऽनाऽऽऽधीऽ	ऽऽनाऽऽऽधी	ऽऽऽनाऽऽऽ	ती
2		3		0

रूपक ताल की $\frac{3}{4}$लयकारी :–

12ती	ऽऽऽ	तीऽऽ	ऽनाऽ	ऽऽधी	ऽऽऽ	
	3		×			
नाऽऽ	ऽधीऽ	ऽऽना	ऽऽऽ	ती		
2		3		0		

रूपक ताल की $\frac{4}{3}$लयकारी :–

123ती	ऽऽतीऽ	ऽनाऽऽ	धीऽऽना	ऽऽधीऽ	ऽनाऽऽ	ती
		2		3		0

रूपक ताल की $\frac{4}{5}$ लयकारी :–

1तीऽऽ	ऽऽतीऽ	ऽऽऽना	ऽऽऽऽ	धीऽऽऽ	ऽनाऽऽ	ऽऽधीऽ	ऽऽऽना	ऽऽऽऽ	ती
		×			2		3		0

5.3.2 11 मात्रा की ताल में लयकारी :–

रूद्र ताल

मात्रा – 11, विभाग – 11, ताली – 1, 2, 4, 5, 6, 8, 9 व 10 पर, खाली – 3, 7 व 11 पर

ठेका – 1

धी	ना	धी	ना	ता	ती	ना	क	त्ता	धी	ना	धी
×	2	0	3	4	5	0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की आड़ :–

12धी	ऽनाऽ	धीऽना	ऽताऽ	तीऽना	ऽकऽ	ताऽधी	ऽनाऽ	धी
3	4	5	0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की कुआड़ :–

धीऽऽऽ	नाऽऽऽधी	ऽऽऽनाऽ	ऽऽताऽऽ	ऽतीऽऽऽ	नाऽऽऽक	ऽऽऽताऽ	ऽऽधीऽऽ	ऽनाऽऽ	धी
0	3	4	5	0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की बिआड़ :–

धी ऽ	ऽऽनाऽऽऽधी	ऽऽऽनाऽऽऽ	ताऽऽऽतीऽऽऽ	ऽनाऽऽऽकऽ	ऽऽताऽऽऽधी	ऽऽऽनाऽऽऽ	धी
4	5	0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की $\frac{3}{4}$ लयकारी :–

1धीऽ	ऽऽना	ऽऽऽ	धीऽऽ	ऽनाऽ	ऽऽता	ऽऽऽ	तीऽऽ	ऽनाऽ	ऽऽक
6	7	8	0	×	2	0	3	4	5

ऽऽऽ	ताऽऽ	ऽधीऽ	ऽऽना	ऽऽऽ	धी
0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की $\frac{4}{3}$ लयकारी :–

12धी	ऽऽनाऽ	ऽधीऽऽ	नाऽऽऽता	ऽऽतीऽ	ऽनाऽऽ	कऽऽऽता	ऽऽधीऽ	ऽनाऽऽ	धी
0	3	4	5	0	6	7	8	0	×

रूद्र ताल की $\frac{4}{5}$ लयकारी :–

धीऽऽ	ऽऽनाऽ	ऽऽऽधी	ऽऽऽऽ	नाऽऽऽ	ऽताऽऽ	ऽऽतीऽ	ऽऽऽना	ऽऽऽऽ	कऽऽऽ	ऽताऽऽ
7	8	0	×	2	0	3	4	5	0	6

ऽऽधीऽ	ऽऽऽना	ऽऽऽऽ	धी
7	8	0	×

5.3.3 झूमरा ताल में लयकारी :–

झूमरा ताल

मात्रा – 14, विभाग – 4, ताली – 1, 4 व 11 पर, खाली – 8 पर

ठेका

धिं ऽधा तिरकिट	धिं धिं धागे तिरकिट	तिं ऽता तिरकिट	धिं धिं धागे तिरकिट	धिं
×	2	0	3	×

झूमरा ताल की आड़ :–

12धिं ऽऽधा तिरकिटधिं	ऽधिंऽ धागेतिर किटतिंऽ	ऽतातिर किटधिंऽ धिंऽधा गेतिरकिट	धिं
	0	3	×

झूमरा ताल की कुआड :–

1234धिं ऽऽऽऽऽ	धाऽतिरकि	टधिंऽऽऽ	धिंऽऽऽधा	ऽगेऽतिर	किटतिंऽऽ	ऽऽऽताऽ
2				0		

तिरकिटधिं	ऽऽऽधिंऽ	ऽऽधाऽगे	ऽतिरकिट	धिं
3				×

झूमरा ताल की बिआड :–

धिंऽऽऽऽऽधा	ऽतिरकिटधिंऽ	ऽऽधिंऽऽऽधा	ऽगेऽतिरकिट
0			

तिंऽऽऽऽऽता	ऽतिरकिटधिंऽ	ऽऽधिंऽऽऽधा	ऽगेऽतिरकिट	धिं
3				×

झूमरा ताल की $\frac{3}{4}$ लयकारी :–

1धिंऽ | ऽऽऽ ऽधाऽ तिरकि | टधिंऽ | ऽऽधिं ऽऽऽ धाऽगे |
3 ×

| ऽतिर किटतिं ऽऽऽ ऽऽता | ऽतिर किटधिं ऽऽऽ |
2 0

| धिंऽऽ ऽधाऽ गेऽति रकिट | धिं
3 ×

झूमरा ताल की $\frac{4}{3}$ लयकारी :–

| 12धिंऽ ऽऽधाऽ तिरकिटऽधिं ऽऽधिंऽ | ऽधाऽगे
2 0

तिरकिटऽतिं ऽऽताऽ | ऽतिरकिटऽ धिंऽऽधिं ऽऽधाऽ गेतिरकिटऽ | धिं
3 ×

झूमरा ताल की $\frac{4}{5}$ लयकारी :–

| 12धिंऽ ऽऽऽऽ ऽधाऽऽ तिरकिट | ऽधिंऽऽ ऽऽधिंऽ ऽऽऽधा | ऽगेऽऽ तिरकिट
3 × 2

ऽतिंऽऽ ऽऽऽऽ | ताऽऽति रकिटऽ धिंऽऽऽ | ऽधिंऽऽ ऽऽधाऽ गेऽऽति रकिटऽ | धिं
0 3 ×

5.3.4 सूलताल में लयकारी :–

सूलताल

मात्रा – 10, विभाग – 5, ताली – 1, 5 व 7 पर, खाली – 3 व 9 पर

ठेका

| धा धा | दिं ता | किट धा | तिट कता | गदि गन | धा
× 0 2 3 0 ×

सूलताल की आड :–

12धा | ऽधाऽ दिंऽता | ऽकिट धातिट | कताग दिगन | धा
2 3 0 ×

सूलताल की कुआड :–

| धाऽऽऽधा ऽऽऽदिंऽ | ऽऽताऽऽ ऽकिऽटऽ | धाऽऽऽति ऽटऽकऽ | ताऽगऽदि ऽगऽनऽ | धा
0 2 3 0 ×

सूलताल की बिआड :–

| 12धाऽऽऽधा ऽऽऽदिंऽऽऽ | ताऽऽऽकिऽट ऽधाऽऽऽतिऽ | टऽकऽताऽग ऽदिऽगऽनऽ | धा
2 3 0 ×

सूलताल की $\frac{3}{4}$ लयकारी :–

12धा ऽऽऽ	धाऽऽ ऽदिंऽ	ऽऽता ऽऽऽ	किऽट ऽधाऽ	ऽऽति ऽटऽ	कऽता ऽगऽ	दिऽग ऽनऽ	धा
3	0	×	0	2	3	0	×

सूलताल की $\frac{4}{3}$ लयकारी :–

12धाऽ ऽधाऽऽ	दिंऽऽता ऽऽकिऽ	टधाऽऽ तिऽटक	ऽतागऽ दिगऽन	धा
0	2	3	0	×

सूलताल की $\frac{4}{5}$ लयकारी :–

12धाऽ	ऽऽऽधा ऽऽऽऽ	दिंऽऽऽ ऽताऽऽ	ऽऽकिऽ टऽऽधा	ऽऽऽऽ
	0	×	0	2
तिऽटऽ	ऽकऽता ऽऽगऽ	दिऽऽग ऽनऽऽ	धा	
	3	0	×	

5.3.5 यतिशिखर ताल में लयकारी :–

यतिशिखर ताल

मात्रा – 15, विभाग – 10, ताली – 1, 2, 4, 6, 7, 8, 10, 11, 12 व 14 पर

ठेका

धा	तत धिं	ना त्रक	धिं	धिं	ना तत	धागे	नधा	त्रक धिं	गदि गन	धा
×	2	3	4	5	6	7	8	9	10	×

यतिशिखर ताल की आड़ :–

धाऽत	तधिंऽ	नाऽत्र कधिंऽ	धिंऽना	ऽतत	धागेना धात्रक	धिंऽग दिगन	धा
4	5	6	7	8	9	10	×

यतिशिखर ताल की कुआड़ :–

धाऽऽऽत ऽतऽधिंऽ	ऽऽनाऽऽ	ऽत्रऽकऽ	धिंऽऽऽधिं ऽऽऽनाऽ
3	4	5	6
ऽऽतऽत	ऽधाऽगेऽ	नाऽधाऽत्र ऽकऽधिंऽ	ऽऽगऽदि ऽगऽनऽ	धा
7	8	9	10	×

यतिशिखर ताल की बिआड़ :–

123धाऽऽऽ	तऽतऽधिंऽऽ ऽनाऽऽऽत्रऽ	कऽधिंऽऽऽधिं	ऽऽऽनाऽऽऽ	तऽतऽधाऽगे ऽनाऽधाऽत्रऽ
	6	7	8	9
कऽधिंऽऽऽग ऽदिऽगऽनऽ	धा			
10	×			

यतिशिखर ताल की $\frac{3}{4}$ लयकारी :–

धाऽऽ	ऽतऽ तऽधिं	ऽऽऽ नाऽऽ	ऽत्रऽ	कऽधिं ऽऽऽ	धिंऽऽ ऽनाऽ	ऽऽत
8	9	10	×	2	3	4
ऽतऽ	धाऽगे ऽनाऽ	धाऽत्र	ऽकऽ	धिंऽऽ ऽगऽ	दिऽग ऽनऽ	धा
5	6	7	8	9	10	×

यतिशिखर ताल की $\frac{4}{3}$ लयकारी :–

12धा ऽऽतत	ऽधिंऽऽ	नाऽऽत्र	कऽधिंऽ ऽधिंऽऽ
3	4	5	6
नाऽऽत	तऽधागे	ऽनाधाऽ त्रकऽधिं	ऽऽगदि ऽगनऽ	धा
7	8	9	10	×

यतिशिखर ताल की $\frac{4}{5}$ लयकारी :–

1धाऽऽ ऽऽतऽ	तऽऽधिं ऽऽऽऽ	नाऽऽऽ	ऽत्रऽक ऽऽधिंऽ	ऽऽऽधिं ऽऽऽऽ	नाऽऽऽ
9	10	×	2	3	4
ऽतऽत	ऽऽधाऽ गेऽऽना	ऽधाऽऽ	त्रऽकऽ	ऽधिंऽऽ ऽऽगऽ	दिऽऽग ऽनऽऽ	धा
5	6	7	8	9	10	×

5.3.6 पश्तो ताल में लयकारी :–

पश्तो ताल

मात्रा – 7, विभाग – 3, ताली – 1, 4 व 6 पर

ठेका

त्रक धिं ऽ	धा गे	तिं ऽ	त्रक
×	2	3	×

पश्तो ताल की आड :–

1त्रक	धिंऽऽ ऽधाऽ	गेऽतिं ऽऽऽ	त्रक
	2	3	×

पश्तो ताल की कुआड :–

12त्रऽक ऽधिंऽऽऽ	ऽऽऽऽधा ऽऽऽगेऽ	ऽऽतिंऽऽ ऽऽऽऽऽ	त्रक
	2	3	×

पश्तो ताल की बिआड :–

त्रऽकऽधिंऽऽ ऽऽऽऽऽधाऽ	ऽऽगेऽऽऽतिं ऽऽऽऽऽऽऽ	त्रक
2	3	×

पश्तो ताल की $\frac{3}{4}$ लयकारी :–

12त्र	ऽकऽ धिंऽऽ	ऽऽऽ ऽऽधा ऽऽऽ	गेऽऽ ऽतिंऽ	ऽऽऽ ऽऽऽ	त्रक
	3	×	2	3	×

पश्तो ताल की $\frac{4}{3}$ लयकारी :–

123त्र ऽकधिंऽ	ऽऽऽऽ धाऽऽगे	ऽऽतिंऽ ऽऽऽऽ	त्रक
	2	3	×

पश्तो ताल की $\frac{4}{5}$ लयकारी :–

1त्रऽक ऽऽधिंऽ	ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ धाऽऽऽ	ऽगेऽऽ ऽऽतिंऽ	ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ	त्रक
3	×	2	3	×

अभ्यास प्रश्न

क. लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. रूपक ताल की आड, कुआड व बिआड लिखिए।
2. रूद्रताल की कुआड व बिआड लिपिबद्ध कीजिए।
3. सूलताल ताल की $\frac{3}{4}$ लयकारी लिखिए ।

5.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पाठ्यक्रम की तालों के ठेकों एवं उनको विभिन्न लयकारी (आड, कुआड, बिआड, 3/4, 4/3 व 4/5) में लिपिबद्ध करने के विषय में जान चुके होंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप लयकारी को भली–भांति समझ चुके होंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप लयकारी का प्रयोग अपने वादन(एकल वादन व संगत) में करने में सक्षम होंगे जिससे आपका वादन प्रभावशाली होगा। इससे आप लयकारी को बोलने एवं बजाने में भी सक्षम होंगे। तबले की तालों के ठेकों को विभिन्न लयकारी में लिपिबद्ध करने एवं उसके क्रियात्मक स्वरूप को तबले में प्रस्तुत कर पाएंगे।

5.5 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. मिश्र, पं0 विजयशंकर, तबला पुराण, कनिष्क पब्लिशर्स, दिल्ली।
3. श्रीवास्तव, श्री गिरीश चन्द्र, *ताल परिचय,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

5.6 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम की किन्हीं चार तालों के ठेकों को आड, कुआड, बिआड, 3/4, 4/3 व 4/5 की लयकारी सहित लिपिबद्ध कीजिए।

इकाई 6 – तबले की रचनाओं (पाठ्यक्रमानुसार) को लिपिबद्ध करना

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 पाठ्यक्रम की तालों में तबले की रचनाएं
6.3.1 रूपक ताल में रचनाएं
6.3.2 11 मात्रा की ताल (रूद्रताल) में रचनाएं
6.3.3 झूमरा ताल में रचनाएं
6.3.4 सूलताल या सूलफाक्ता ताल में रचनाएं
6.3.5 पश्तो ताल में रचनाएं
6.3.6 यतिशिखर ताल में रचनाएं
6.4 सारांश
6.5 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
6.6 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रदर्शन कला–संगीत में स्नातकोत्तर (एम0पी0ए0एम0टी0–606) पाठ्यक्रम की छठी इकाई है। पूर्व की इकाईयों में आपने पाठ्यक्रम की तालों का पूर्ण परिचय एवं उनको विभिन्न लयकारीयों जैसे दुगुन, तिगुन, चौगुन, आड़, कुआड, बिआड़, 3/4, 4/3 एवं 4/5 में लिखना एवं प्रयोग करना जान गए हैं।

इस इकाई में आप तबला वादन में प्रयोग होने वाली रचनाओं का अध्ययन करेंगे जो कि भातखण्डे तालिपि में लिपिबद्ध कर प्रस्तुत की गई है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप तबले की रचनाओं को लिपिबद्ध कर भविष्य के सन्दर्भ के लिए सुरक्षित कर पाएंगे एवं इनको तबले पर क्रियात्मक रूप में भलि–भांति प्रस्तुत कर पाएंगे।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

1. तबले की रचनाओं को लिपिबद्ध कर पाएंगे।
2. तबले की रचनाओं की लिपि को समझकर क्रियात्मक रूप में प्रस्तुत कर पाएंगे।
3. यह भी जानेंगे की एक ही रचना को मात्राओं के अनुसार किन–किन तालों में प्रयोग किया जा सकता है।

6.3 पाठ्यक्रम की तालों में तबले की रचनाएं

6.3.1 रूपक ताल में रचनाएं :–

पाठ्यक्रम के अनुसार रूपक ताल विस्तृत अध्ययन की ताल है एवं प्रयोगात्मक पाठ्यक्रम में मंच प्रदर्शन के लिए रखी गई है। इसमें उठान, पेशकार, दो कायदे, रेला, टुक्ड़ा, परन, चक्करदार(सादा), चक्करदार (फरमाइशी) एवं गत लिपिबद्ध कर प्रस्तुत की जा रही है।

ठेका

तिं	तिं	ना	धिं	ना	धिं	ना	तिं
0			2		3		0

उठान

धागेतिना	किऽनकतातिर	किटतकतिरकिट		
0				
तकतिरकिटतक	तिरकिटधाती	धाधा	धाऽ	
2		3		
ऽऽ	तिरकिटधाती	धाधा		
0				
धाऽ	ऽऽ	तिरकिटधाती	धाधा	तिं
2		3		0

पेशकार (मुख्य बोल)

धिंऽधिता	ऽधाधिंता	धातीधाधा	
0			
तिंतातिऽ	तिंताऽता	धिंताधाती	धाधाधिंता
2		3	

पल्टा – 1

ऽधाधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाधा	
0			
तिंताऽता	तिंताऽता	धिंताधाती	धाधाधिंता
2		3	

पल्टा – 2

धिंताऽधा	ऽधाधिंता	धातीधाधा	
0			
तिंतातिंता	ऽताऽता	धिंताधाती	धाधाधिंता
2		3	

पल्टा – 3

धातीधाधा	धिंताधिंता	धातीधाधा	
0			
तिंतातती	तातातिंता	धिंताधाती	धाधाधिंता
2		3	

तिहाई

धिंताधाती	धाधातिंता	धाऽधिंता	
0			
धातीधाधा	तिंताधाऽ	धिंताधाती	धाधातिंता तिं
2		3	0

नोट– मुख्य बोल एवं प्रत्येक पल्टा दो–दो बार बजेगा।

कायदा 1 – चतुरश्र जाति

धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	तिनाकिन
2		3	
तातिरकिटति	तिटकिन	तातीकिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	धिनागिन
2		3	

पल्टा – 1

धातीधिन	धातिरकिटधि	तिटधिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	तिनाकिन
2		3	
तातीकिन	तातिरकिटति	तिटकिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	धिनागिन
2		3	

पल्टा – 2

तिटधिन	धातीधिन	तिटधिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	तिनाकिन
2		3	
तिटकिन	तातीकिन	तिटकिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	धिनागिन
2		3	

पल्टा – 3

तिटधिन	तिटधिन	धातीधिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	तिनाकिन
2		3	
तिटकिन	तिटकिन	तातीकिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	धिनागिन
2		3	

तिहाई

धातीधिन	तिनाकिन	धाऽधाति	
0			
धिनतिना	किनधाऽ	धातीधिन	तिनकिन ति
2		3	0

कायदा 2 – तिस्त्र जाति

धगेन	धातिरकिट	धगेन	
0			
धातिरकिट	धितिट	धिनति	नाकिन
2		3	
तकेन	तातिरकिट	तकेन	
0			
धातिरकिट	धितिट	धिनधि	नागिन
2		3	

कायदे की दुगुन

धगेनधातिरकिट	धगेनधातिरकिट	धितिटधिनति	
0			
नाकिनतकेन	तातिरकिटतकेन	धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन
2		3	

पल्टा – 1

धगेनधातिरकिट	धितिटधगेन	धातिरकिटधितिट	
0			
धगेनधातिरकिट	धितिटधगेन	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकेना
2		3	
तकेनतातिरकिट	तितिटतकेन	तातिरकिटतितिट	
0			
धगेनधातिरकिट	धितिटधगेन	धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन
2		3	

पल्टा – 2

धातिरकिटधितिट	धगेनधातिरकिट	धितिटधगेन	
0			
धगेनधातिरकिट	धिनधिनागेन	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकेना
2		3	
तातिरकिटधितिट	तकेनतातिरकिट	तितिटतकेन	
0			
धगेनधातिरकिट	धिनधिनागेन	धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन
2		3	

पल्टा – 3

धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन	धातिरकिटधगेन	
0			
धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकेना
2		3	
तातिरकिटतितिट	किनतिनाकिन	तातिरकिटतकेन	
0			
धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन	धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन
2		3	

तिहाई

धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकिन	धाऽधातिरकिट		
0				
धितिटधिनति	नाकिनधाऽ	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकिन	ति
2		3		0

रेला – (मुख्य बोल)

धा	धातिर	किटतक	
0			
तिरकिट	धातिर	किटतक	तिरकिट
2		3	
ता	तातिर	किटतक	
0			
तिरकिट	धातिर	किटतक	तिरकिट
2		3	

रेले की दुगुन

धाधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	
0			
तिरकिटता	तातिरकिटतक	तिरकिटधाति	किटतकतिरकिट
2		3	

पल्टा – 1

धातिरकिटतक	तिरकिटधा	धातिरकिटतक	
0			
तिरकिटतातिर	किटतकतिरकिट	धाधातिर	किटतकतिरकिट
2		3	
तातिरकिटतक	तिरकिटधा	तातिरकिटतक	
0			
तिरकिटतातिर	किटतकतिरकिट	धाधातिर	किटतकतिरकिट
2		3	

पल्टा – 2

तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	
0			
तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तारिकिटतक
2		3	
तिरकिटतातिर	किटतकतिरकिट	तातिरकिटतक	
0			
तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक
2		3	

पल्टा – 3

धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	
0			
धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	तारिकिटतक
2		3	
तातिरकिटतक	तिरकिटतातिर	किटतकतिरकिट	
0			
धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक
2		3	

तिहाई

तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धाऽतिरकिट	
0			
धातिरकिटतक	तिरकिटधाऽ	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट
2		3	

ति
0

टुकडा

दींदीं	तिटतिट	धागेतिट	
0			
ताकेतिट	कऽधातिट	कऽताऽ	धातिरकिटतक
2		3	
तातिरकिटतक	ताकड़ान	धाताितर	
0			
किटतकता	कड़ानधा	तातिरकिटतक	ताकड़ान
2		3	

ति
0

परन

धिटधिट	धागतिट	कऽधातिट	
0			
धागेतिट	कऽधातिट	कऽधातिट	कऽधातिट
2		3	
धागेतिट	गदिगिन	नागेतिट	
0			
धागेतिट	ताकेतिट	कतिटत	किनताके
2		3	
तिटकता	गदिगिन	धागेतिट	
0			
ताकेतिट	धित्ततगे	ऽगधित्त	तगेऽन
2		3	
धित्ता	तिरकिटधित्त	तगेऽन	
0			
धा	तगेऽन	धा	तेगऽन
2		3	
धा	तिरकिटधित्त	तगेऽन	
0			
धा	तगेऽन	धा	तेगऽन
2		3	
धा	तिरकिटधित्त	तगेऽन	
0			
धा	तगेऽन	धा	तगेऽन
2		3	

ति
0

चक्करदार (सादा)

धागेतिट	धागेतिट	ताकेतिट		
0				
ताकेतिट	कऽधातिट	ताकेतिट	गदीगिन	
2		3		
नागेतिट	कतिटत	किनताके		
0				
तिटकता	गदीगिन	धा	तिटकता	
2		3		
गदीगिन	धा	तिटकता		
0				
गदीगिन	धा	धागेतिट	धागेतिट	
2		3		
ताकेतिट	ताकेतिट	कऽधातिट		
0				
ताकेतिट	गदीगिन	नागेतिट	कतिटत	
2		3		
किनताके	तिटकता	गदीगिन		
0				
धा	तिटकता	गदिगिन	धा	
2		3		
तिटकता	गदीगिन	धा		
0				
धागेतिट	धागेतिट	ताकेतिट	ताकेतिट	
2		3		
कऽधातिट	ताकेतिट	गदीगिन		
0				
नागेतिट	कतिटत	किनताके	तिटकता	
2		3		
गदीगिन	धा	तिटकता		
0				
गदीगिन	धा	तिटकता	गदीगन	ति
2		3		0

रूपक ताल अथवा आड़ाचार ताल में चक्करदार हेतु 18 मात्रा का तिहाई युक्त बोल जिसका 'धा' उन्नीसवीं मात्रा पर आएगा। इसको तीन बार बजाने से चक्कदार बोल प्राप्त होगा जो कुल 56 मात्रा का होगा 18+1 = 19×3 = 56+1 = 57

चक्करदार (फरमाइशी)

धिरधिरकिटतक	तकटधा	धिरधिरकिटतक	
0			
तकटधा	धिरधिरकत	धिरधिरकत	तकटधा
2		3	
तकटधा	तिट	कता	
0			
गदी	गिन	कतधिरधिर	किटतकतकट
2		3	
धाऽधिरधिर	किटतकतकट	धाऽधिरधिर	
0			
किटतकतकट	धा	धिरधिरकिटतक	तकटधा
2		3	
धिरधिरकिटतक	तकटधा	धिरधिरकत	
0			
धिरधिरकत	तकटध	तकटधा	तिट
2		3	
कता	गदी	गिन	
0			
कतधिरधिर	किटतकतकट	धाऽधिरधिर	किटतकतकट
2		3	
धाऽधिरधिर	किटतकतकट	धा	
0			
धिरधिरकिटतक	तकटधा	धिरधिरकिटतक	तकटधा
2		3	
धिरधिरकत	धिरधिरकत	तकटधा	
0			
तकटधा	तिट	कता	गदी
2		3	
गिन	कतधिरधिर	किटतकतकट	
0			
धाऽधिरधिर	किटतकतकट	धाऽधिरधिर	किटतकतकट	ति
2		3		0

3.3.4 11 मात्रा की ताल(रूद्रताल) में रचनाएं :–

ग्यारह मात्रा की ताल में हम यहां रूद्रताल को लेंगे। पाठ्यक्रम के अनुसार ग्यारह मात्रा की ताल को विस्तृत अध्ययन हेतु है एवं प्रयोगात्मक पाठ्यक्रम में मंच प्रदर्शन के लिए रखी गई है। इसमें उठान, पेशकार, दो कायदे, रेला, टुकड़ा, परन, चक्करदार (सादा), चक्करदार (फरमाइशी) एवं गत लिपिबद्ध कर प्रस्तुत की जा रही है।

ठेका

धी	ना	धी	ना	ता	ती	ना	क	ता	धी	ना	धी
×	2	0	3	4	5	0	6	7	8	0	×

उठान

धागेतिना	किऽनकतिरकिट	तकतिरकिटतक	तिरकिटधाती
×	2	0	3
धाधा	धा	तिरकिटधाती	धाधा
4	5	0	6
धा	तिरकिटधाती	धाधा	धी
7	8	0	×

पेशकार (मुख्य बोल)

धिंऽधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाधा	धिंताधाती
×	2	0	3
धातीधाधा	तिंतातिऽ	तिताऽता	तिताताती
4	5	0	6
ताताधिंता	धातीधाती	धाधाधिता	
7	8	0	

पल्टा – 1

ऽधाधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाधा	धिंताधाती
×	2	0	3
धातीधाधा	तिंताऽता	तिंताऽता	तिंताधाती
4	5	0	6
धाधाधिंता	धातीधाती	धाधाधिंता	
7	8	0	

पल्टा – 2

ऽधाऽधा	ऽधाधिंता	धातीधाधा	धिंताधाती
×	2	0	3
धातीधाधा	तिंताऽता	ऽताऽता	तिंताधाती
4	5	0	6
धाधाधिंता	धातीधाती	धाधाधिंता	
7	8	0	

पल्टा – 3

धिंताधाती	धाधाधिंता	धातीधाधा	धिंताधाती
×	2	0	3
धातीधाधा	तिंतातिंता	तातीताता	तिताधाती
4	5	0	6
धाधाधिंता	धातीधाती	धाधाधिंता	
7	8	0	

तिहाई

धातीधाती	धाधाधिंता	धाधा	धा
×	2	0	3
धातीधाती	धाधाधिंता	धाधा	धा
4	5	0	6
धातीधाती	धाधाधिंता	धाधा	धी
7	8	0	×

कायदा 1 – चतुरश्र जाति (मुख्य बोल)

धागे	नधा	तिट	धिन
×	2	0	3
धागे	धिना	गिन	धाती
4	5	0	6
धागे	तिना	किन	
7	8	0	
ताके	नता	तिट	किन
×	2	0	3
धागे	धिना	गिन	धाती
4	5	0	6
धागे	धिना	गिन	
7	8	0	

कायदे की दुगुन

धागेनधा	तिटधिन	धागेधिना	गिनधाती
×	2	0	3
धागेतिना	किनताके	नातातिट	किनधागे
4	5	0	6
धिनागिन	धातीधागे	धिनागिन	
7	8	0	

पल्टा – 1

धागेनधा	तिटधिन	धागेनधा	तिटधिन
×	2	0	3
धागेधिना	गिनधागे	धिनागिन	धागेनाधा
4	5	0	6
तिटधिन	धातीधागे	तिनाकेना	
7	8	0	
ताकेनता	तिटकिन	ताकेनता	तिटकिन
×	2	0	3
धागेधिना	गिनधागे	धिनागिन	धागेनाधा
4	5	0	6
तिटधिन	धातीधागे	धिनागिन	
7	8	0	

पल्टा – 2

तिटधिन	धागेनधा	तिटधिन	तिटधिन
×	2	0	3
धागेधिन	तिटधिन	धागेधिन	गिनधागे
4	5	0	6
धिनागिन	धातीधागे	तिनाकिन	
7	8	0	
तिटकिन	ताकेनता	तिटकिन	तिटकिन
×	2	0	3
धागेनधा	तिटधिन	धागेधिना	गिनधागे
4	5	0	6
धिनागिन	धातीधागे	तिनाकिन	
7	8	0	

पल्टा – 3

तिटधिन	तिटधिन	धागेनधा	तिटधिन
×	2	0	3
धागेधिना	गिनधागे	धिनागिन	धागेनधा
4	5	0	6
तिटधिन	धातीधागे	धिनागिन	
7	8	0	
तिटकिन	तिटकिन	ताकेनता	तिटकिन
×	2	0	3
धागेधिना	गिनधागे	धिनागिन	धागेनधा
4	5	0	6

तिटधिन	धातीधागे	तिनाकिन	
7	8	0	

तिहाई

धातीधागे	धिनागिन	धाधा	धा
×	2	0	3
धातीधागे	धिनागिन	धाधा	धा
4	5	0	6
धातीधागे	धिनागिन	धाधा	धी
7	8	0	×

कायदा 1 – तिस्त्र जाति

धाऽऽ	धगेन	धाऽऽ	धातिरकिट
×	2	0	3
धितिट	गिनधा	ऽगिन	धातिरकिट
4	5	0	6
धितिट	गिनति	नाकिन	
7	8	0	
ताऽऽ	तकेन	ताऽऽ	तातिरकिट
×	2	0	3
तितिट	गिनधा	ऽगिन	धातिरकिट
4	5	0	6
धितिट	गिनति	नाकिन	
7	8	0	

कायदे की दुगुन

धाऽऽधेगन	धाऽऽधातिरकिट	धितिटगिनधा	ऽगिनधातिरकिट
×	2	0	3
धितिटगिनति	नाकिनताऽऽ	तकेनताऽऽ	तातिरकिटतितिट
4	5	0	6
गिनधाऽगिन	धातिरकिटधितिट	गिनधिनागिन	
7	8	0	

पल्टा – 1

धगेनधातिरकिट	धितिटधगेन	धाऽऽगिनधा	ऽगिनधातिरकिट
×	2	0	3
धितिटगिनति	नाकिनतकेन	तातिरकिटतितिट	तकेनताऽऽ
4	5	0	6
गिनधाऽगिन	धातिरकिटधितिट	गिनधिनागिन	
7	8	0	

पल्टा – 2

धातिरकिटधितिट	धगेनधातिरकिट	धितिटगिनधा	ऽगिनधातिर
×	2	0	3
धितिटगिनति	नाकिनतातिरकिट	तितिटतकेन	तातिरकिटतितिट
4	5	0	6
गिनधाऽगिन	धातिरकिटधितिट	गिनधिनागिन	
7	8	0	

पल्टा – 3

धातिरकिटधितिट	गिनतिनाकिन	धातिरकिटधितिट	धगेनधातिरकिट
×	2	0	3
धितिटगिनति	नाकेनतातिरकिट	तिटतिटकिनति	नाकिनधातिरकिट
4	5	0	6
धितिटधगेन	धातिरकिटधितिट	गिनधिनागिन	
7	8	0	

तिहाई

धातिरकिटधितिट	गिनतिनाकिन	धाधा	धा
×	2	0	3
धातिरकिटधितिट	गिनतिनाकिन	धा	धा
4	5	0	6
धातिरकिटधितिट	गिनतिनाकिन	धाधा	धी
7	8	0	×

रेला – (मुख्य बोल)

धा	धातिर	किटतक	तिरकिट
×	2	0	3
धातिर	किटतक	तिरकिट	धातिर
4	5	0	6
किटतक	तातिर	किटतक	
7	8	0	
ता	तातिर	किटतक	तिरकिट
×	2	0	3
धातिर	किटतक	तिरकिट	धातिर
4	5	0	6
किटतक	धातिर	किटतक	
7	8	0	

रेले की दुगुन

धाधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर
×	2	0	3
किटतकतातिर	किटतकता	तातिरकिटतक	तिरकिटधातिर
4	5	0	6
किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	
7	8	0	

पल्टा – 1

धातिरकिटतक	तिरकिटधा	धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर
×	2	0	3
किटतकतातिर	किटतकतातिर	किटतकतिरकिट	धाधातिर
4	5	0	6
किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	
7	8	0	

पल्टा – 2

तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर
×	2	0	3
किटतकतातिर	किटतकतिरकिट	तातिरकिटतक	तिरकिटधातिर
4	5	0	6
किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	
7	8	0	

पल्टा – 3

धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर
×	2	0	3
किटतकतातिर	किटतकतातिर	किटतकधातिर	किटतकतातिर
4	5	0	6
किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	
7	8	0	

तिहाई

धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	तिरकिटधाती	धा
×	2	0	3
धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	तिरकिटधाती	धा
4	5	0	6
धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	तिरकिटधाती	धी
7	8	0	×

टुकडा

घेतिरकिटतक	ताकेतिट	कतगदी	गिननाके
×	2	0	3
तिटकता	गदीगिन	धाऽदीं	ताऽतिट
4	5	0	6
कतिटत	किनताके	तिटकता	
7	8	0	
गदीगिन	धाऽकत	धाऽकत	धा
×	2	0	3
गदीगिन	धाऽकत	धाऽकत	धा
4	5	0	6
गदीगिन	धाऽकत	धाऽकत	धी
7	8	0	×

परन

धिटधिट	धागेतिट	कऽधातिट	धागेतिट
×	2	0	3
कऽधातिट	कऽधातिट	कऽधातिट	धागेतिट
4	5	0	6
गदीगिन	नागेतिट	धागेतिट	
7	8	0	
धागेतिट	ताकेतिट	ताकेतिट	कतिटत
×	2	0	3
किनताके	तिटकता	गदीगिन	धागेतिट
4	5	0	6
धागेतिट	ताकेतिट	ताकेतिट	
7	8	0	
धित्ततगे	ऽनधित्त	नगेऽन	धित्ता
×	2	0	3
तिरकिटधित्त	तगेऽन	धा	ऽ
4	5	0	6
धित्ततगे	ऽनधित्त	तगेऽन	
7	8	0	
धित्ता	तिरकिटधित्त	तगेऽन	धा
×	2	0	3
ऽ	धित्ततगे	ऽनधित्त	तगेऽन
4	5	0	6
धित्ता	तिरकिटधित्त	तगेऽन	धी
7	8	0	×

चक्करदार – सादा

घेतिरकिटतक	ता	घेतिरकिटतक	ताऽकता
×	2	0	3
गऽदींऽ	कताधाऽ	घेतिरकिटतक	ता
4	5	0	6
घेतिरकिटतक	ताऽकता	धा	
7	8	0	
ताऽकता	धा	ताऽकता	धा
×	2	0	3
घेतिरकिटतक	ता	घेतिरकिटतक	ताऽकता
4	5	0	6
गऽदींऽ	कताधाऽ	घेतिरकिटतक	
7	8	0	
ता	घेतिरकिटतक	ताऽकता	धा
×	2	0	3
ताऽकता	धा	ताऽकता	धा
4	5	0	6
घेतिरकिटतक	ता	घेतिरकिटतक	
7	8	0	
ताऽकता	गऽदींऽ	कतधाऽ	घेतिरकिटतक
×	2	0	3
ता	घेतिरकिटतक	ताऽकता	धा
4	5	0	6
ताऽकता	धा	ताऽकता	धी
7	8	0	×

चक्करदार – फरमाइशी

घेतिरकिटतक	तकटधा	घेतिरकिटतक	तकटधा
×	2	0	3
घेतिरकिटतक	तकटधा	तिटकता	गदीगिन
4	5	0	6
घेतिरकिटतक	तातिरकिटतक	घेतिरकिटतक	
7	8	0	
धा	ऽ	घेतिरकिटतक	धा
×	2	0	3
ऽ	घेतिरकिटतक	धा	ऽ
4	5	0	6
घेतिरकिटतक	तकटधा	घेतिरकिटतक	
7	8	0	

तकटधा	घेतिरकिटतक	तकटधा	तिटकता
×	2	0	3
गदिगन	घेतिरकिटतक	तातिरकिटतक	घेतिरकिटतक
4	5	0	6
धा	ऽ	घेतिरकिटतक	
7	8	0	
धा	ऽ	घेतिरकिटतक	धा
×	2	0	3
ऽ	घेतिरकिटतक	तकटधा	घेतिरकिटतक
4	5	0	6
तकटधा	घेतिरकिटतक	तकटधा	
7	8	0	
तिटकता	गदीगिन	घेतिरकिटतक	तातिरकिटतक
×	2	0	3
घेतिरकिटतक	धा	ऽ	घेतिरकिटतक
4	5	0	6
धा	ऽ	घेतिरकिटतक	धी
7	8	0	×

गत

तकट	तकट	धातिरकिट	धितिट
×	2	0	3
घेऽत	राऽन	धाऽधिं	ऽनाऽ
4	5	0	6
कडध	नाऽन	धगत	
7	8	0	
तकत	धातिरकिट	धितिट	कताग
×	2	0	3
दिगिन	धा	कताग	दीगिन
4	5	0	6
धा	कताग	दीगिन	धी
7	8	0	×

6.3.3 झूमरा ताल में रचनाएं :–

पाठ्यक्रम के अनुसार यह अविस्तृत अध्ययन की ताल है। इस ताल में एकल वादन नहीं किया जाता बल्कि यह ताल ख्याल गायकी के साथ प्रयोग की जाती है। अतः इसके ठेके को विलम्बित लय में बजाने का अभ्यास करने की आवश्यकता है एवं अन्तिम मात्राओं में एक, दो एवं चार मात्रा में मुखड़ा बजाकर सम पर आना होता है।

ठेका

धिं	ऽधा	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तिं	ऽता	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	धिं
×			2				0			3				×

3.3.7 सूलताल या सूलफाक्ता ताल में रचनाएं :–

यह ताल पखावज पर बजाई जाती है एवं पाठ्यक्रम के अनुसार यह अविस्तृत अध्ययन की ताल है। इसमें तिहाई, टुकड़ा, परन, चक्करदार (सादा) लिपिबद्ध कर प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

ठेका

धा	धा	दिं	ता	किट	धा	तिट	कता	गदि	गन	धा
×		0		2		3		0		×

तिहाई – दमदार

तिटकता	गदीगिन	धा	ऽ	तिटकता	गदीगिन	धा	ऽ	तिटकता	गदीगिन	धा
×		0		2		3		0		×

तिहाई – बेदम

तिटकता	गदीगिन	धाधा	धातिट	कतागदी	गिनधा	धाधा	तिटकता	गदीगिन	धाधा	धा
×		0		2		3		0		×

टुकड़ा

धागेतिट	धागेतिट	ताकेतिट	ताकेतिट	कऽधातिट	
×		0		2	
धागेतिट	गदीगिन	नागेतिट	कतिटत	किनताके	
	3		0		
तिटकता	गदीगिन	धाधा	धातिट	कतागदी	
×		0		2	
गिनधा	धाधा	तिटकता	गदीगिन	धाधा	धा
	3		0		×

परन

धिटधिट	धागेतिट	कऽधातिट	धागेतिट	कऽधातिट	
×		0		2	
कऽधातिट	कऽधातिट	धागेतिट	गदीगिन	नागेतिट	
	3		0		
कतिटत	किनताके	तिटकता	गदीगिन	धागेतिट	
×		0		2	
धागेतिट	ताकेतिट	ताकेतिट	धित्ततगे	ऽनधित्त	
	3		0		
तगेऽन	धिता	तिरकिटधित्त	तगेऽन	धा	
×		0		2	
तिरकिटधित्त	तगेऽन	धा	तिरकिटधित्त	तगेऽन	धा
	3		0		×

चक्करदार सादा

धातिटधा	तिटधाधा	तिटकऽधा	तिटधाधा	तिटकऽधा	
×		0		2	
तिटधाधा	तिटकऽधा	तिट	धागेऽत	किटधागे	
	3		0		
तिटकता	गदीगिन	धा	गदीगिन	धा	
×		0		2	
गदीगिन	धा	धातिटधा	तिटधाधा	तिटकऽधा	
	3		0		
तिटधाधा	तिटकऽधा	तिटधाधा	तिटकऽधा	तिट	
×		0		2	
धागेऽत	किटधागे	तिटकता	गदीगन	धा	
	3		0		
गदीगिन	धा	गदीगिन	धा	धातिटधा	
×		0		2	
तिटधाधा	तिटकऽधा	तिटधाधा	तिटकऽधा	तिटधाधा	
	3		0		
तिटकऽधा	तिट	धागेऽत	किटधागे	तिटकता	
×		0		2	
गदीगिन	धा	गदीगिन	धा	गदीगिन	धा
	3		0		×

6.3.5 पश्तो ताल में रचनाएं :–

यह ताल पखावज पर बजाई जाती है एवं पाठ्यक्रम के अनुसार यह अविस्तृत अध्ययन की ताल है। यह अप्रचलित ताल है। इस ताल की संरचना रूपक ताल की भांति है परन्तु ठेके के बोल में परिवर्तन होने से इसका नाम भिन्न है।

ठेका – 1

त्रक	धिं	ऽ	धा	गे	तिं	ऽ	त्रक
×			2		0		×

ठेका – 2

तिं	ऽता	त्रक	धिं	ऽ	धा	ऽ	ति
×			2		0		×

इसमें रूपक की भांति रचनाएं बजाने का प्रचलन नहीं है, बल्कि इसके ठेके को विशिष्ट रचना के साथ प्रयोग किया जाता है।

6.3.6 यतिशिखर ताल में रचनाएं :–

यह ताल पखावज पर बजाई जाती है एवं पाठ्यक्रम के अनुसार यह अविस्तृत अध्ययन की ताल है। यह अप्रचलित ताल है।

ठेका

धा	तत	धि	ना	त्रक	धिं	धिं	ना	तत	धागे	नधा	त्रक	धिना	गदि	गिन	धा
×	2		3		4	5	6		7	8	9		10		×

इस ताल में उठान, टुकड़े, परन, चक्करदार आदि रचनाएं पंचमसवारी ताल के समान प्रयोग की जाएंगी। आपने तृतीय सेमेस्टर में पंचमसवारी ताल की रचनाओं को सीखा हुआ है।

6.4 सारांश

तबला वादन हेतु तबले की रचनाओं का ज्ञान आवश्यक है जो शिक्षक एवं प्राप्त पुस्तकों में रचनाओं से प्राप्त किया जा सकता है। इस इकाई में पाठ्यक्रम की तालों में विभिन्न रचनाएं लिपिबद्ध कर प्रस्तुत की गई हैं जिसमें भातखण्डे ताल पद्धति का प्रयोग किया गया है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस इकाई में दी गई सभी रचनाओं को तबले पर प्रयोग करने में सक्षम होंगे। पुस्तकों में भी तबले की रचनाएं प्राप्त होती है अतः इस इकाई के अध्ययन के पश्चात तबले की रचनाओं को पुस्तक से पढ़कर भी तबले पर बजा पाएंगे। इस इकाई से आप रचनाओं के तालों में प्रयोग के विषय में जान गए हैं जो कि आपको सफल तबला वादक बनने में सहायक होगा।

6.5 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. मिस्त्री, डॉ0 आबान ई0, तबले की बन्दिशें, स्वर साधना समिति, एनेक्स जम्बुलबाडी, मुम्बई।
2. पागलदास, रामशंकर, तबला कौमुदी, संगीत कार्यालय, हाथरस।
3. मिश्र, पं0 छोटेलाल, ताल प्रसून, कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

6.6 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम की किसी एक ताल में उठान, पेशकार, दो कायदे, रेला, टुकड़ा, परन, चक्करदार (सादा), चक्करदार (फरमाइशी) एवं गत लिपिबद्ध कीजिए।